नफ़्स का तज़किया और हम

मुहम्मद फ़ारूक़ ख़ाँ (एम.ए.)

विषय-सूची

- दो शब्द 5
- दीन का ज़िन्दगी से ताल्लुक़ 7
- तज़किया का अस्ल मतलब 11
- नफ़्स के तज़किए के हैरान करनेवाले नतीजे 17
- भलाई के काम और नफ़्स का तज़किया 20
- नफ़्स के तज़किए की दावत 24
- नफ़्स के तज़किए के साधन 26
- आयतों की तिलावत 27
- किताब की तालीम 28
- हिकमत की तालीम 29
- अख़लाक़ी फ़िक्र कैसे पैदा की जाए 33
- अख़लाक़ 33
- इस्लामी विचारधारा 36
- इस्लामी अख़लाक़ी निज़ाम की ख़ूसूसियतें 43
- जीवन और विकास 44
- हुस्नो-सदाक़त 45
- इल्म और सूझ-बूझ 46
- शक्ति और ग़ल्बा 47
- अद्ल व इनसाफ़ 47
- रहमत और मुहब्बत 48
- वहदत (एकत्व) 49

- भलाई के काम पर उभारनेवाले 49
- शुक्र का जज़्बा 50
- अंजाम और नतीजे पर निगाह 50
- अन्दरूनी तहरीक (प्रेरणा) 51
- अक़्ल (बुद्धि) 52
- नफ़ा-नुक़सान 52
- आगे बढ़ जाने का जज़्बा 53
- ग़ैरत का एहसास 53
- जमालयाती एहसास और ख़ुशज़ौक़ी 54

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम।

"ईश्वर के नाम से जो बड़ा दयावान, अत्यन्त कृपाशील है।"

दो शब्द

दुनिया में दीन की इक़ामत और हक़ की शहादत के फ़र्ज़ को अंजाम देने के लिए और इस सिलसिले में कोई असरदार और नतीजा-ख़ेज काम करने के लिए ज़रूरी है कि अहले-हक़ एक ऐसे गरोह की शक्ल में उभरकर दुनिया के सामने आएँ जिसको अपने मक़सदे-हयात और नस्बुल-ऐन के लिहाज़ से ही दूसरे गरोहों पर फ़ौक़ियत और बरतरी हासिल न हो बल्कि किरदार व अख़लाक़ के आधार पर भी वह ऊँचे मक़ाम पर फ़ाइज़ हों। उम्मते-मुस्लिमा के वुजूद के मक़सद और उसके तक़ाज़ों को जानने के लिए दूसरी अहम किताबों के अलावा इस छोटी सी किताब "नफ़्स का तज़किया और हम" का अध्ययन भी लाभदायक होगा।

इस किताब में नफ़्स के तज़किए के अलावा बुलन्द और बेहतरीन अख़लाक़ की अहमियत व ज़रूरत, अख़लाक़ी फ़िक्र और उसको उभारनेवाली चीज़ों आदि मामलों पर भी विचार किया गया है। उन पर चर्चा दलील के साथ और विस्तार से की गई है। इस किताब के अध्ययन से उम्मीद है कि हर तरह के सवालों के जवाब मिलेंगे और यह हक़ीक़त स्पष्ट हो सकेगी कि क़ुरआन ने इस्लामी समाज की बनावट व निर्माण के सिलसिले में जो हिदायात दी है वे निहायत मुकम्मल, मानवीय तकाज़ों के अनुरूप और हर तरह की त्रुटियों से मुक्त हैं।

ख़ुदा से दुआ है कि वह इस कोशिश को क़बूल फ़रमाए और यह लोगों के लिए फायदेमन्द साबित हो सके।

ख़ाकसार

मुहम्मद फ़ारूक़ ख़ाँ

दीन का ज़िन्दगी से ताल्लुक़

नफ़्स का तज़किया दीनी ही नहीं अपनी जगह एक इल्मी और साइंटिफ़िक इस्तिलाह (परिभाषा) भी है। नफ़्स के तज़किए की हक़ीक़त और दीन में उसकी अहमियत को जानने के लिए ज़रूरी है कि हम दीन और इनसानी ज़िन्दगी से उसके अस्ल ताल्लुक़ को पहले समझ लें। जिन लोगों ने दीन का गहरा अध्ययन किया है वे इस हक़ीक़त को अच्छी तरह जानते हैं कि ख़ुदा ने इनसान को उन्हीं चीज़ों का पाबन्द ठहराया है जो हक़ीक़त में इनसान की अपनी फ़ितरत के अस्ल तक़ाज़े हैं, और ख़ुदा जिन बातों पर पकड़ और पूछ-गच्छ करता है उनसे ख़ुद हमारी फ़ितरत भी नफ़रत करती है। क़ुरआन मजीद में है—

> "अतएव एक तरफ़ के होकर अपना रुख़ दीन (धर्म) की तरफ़ जमा दो। अल्लाह की उस फ़ितरत की तरफ़ जिसपर उसने लोगों को पैदा किया। अल्लाह की बनाई हुई संरचना बदली नहीं जा सकती। यही सीधा और सच्चा दीन है।"
>
> (क़ुरआन, 30:30)

हदीस की किताब बुख़ारी और तिरमिज़ी में भी है—

"हर बच्चा फ़ितरत पर पैदा होता है।"

इनसान की फ़ितरत में ख़ुदा की तरफ़ बढ़ने का जज़बा और तवज्जोह ठीक उसी तरह पाई जाती है जिस तरह लोहे के अन्दर चुम्बक की तरफ़ खिंचने की या आग के शोले के अन्दर ऊपर उठने की फ़ितरत पाई जाती है। वे तमाम चीज़ें जो ख़ुदा की तरफ़ बढ़ने में

मददगार साबित होती हैं उनको इनसान के लिए ख़ुशनसीबी और कामयाबी की वजह क़रार दिया गया है। इसके ख़िलाफ़ जो चीज़ें ख़ुदा और बन्दे के बीच दूरी और फ़ासला पैदा करती हैं उनको शरीअत ने गुनाह और बुराई ठहराया है। उनकी हैसियत हक़ीक़त में फ़साद और बिगाड़ की है और उनको अमल में लाना हक़ीक़त के पहलू से नफ़्स (मन) पर एक ज़ुल्म है।

वे तमाम रुकावटें चाहे उनका ताल्लुक़ फ़िक्र और सोच से हो या नफ़्स और मन से या फिर वे अमल से ताल्लुक़ रखती हों, अगर दूर कर दी जाएँ, मिसाल के तौर पर तंग-ख़याली, तंगदिली, बदज़ौक़ी, ख़ुदग़र्ज़ी और कमीनगी वग़ैरा, तो इस सूरत में इनसान की फ़ितरी ख़ूसूसियतें और जौहर खुलकर सामने आते हैं। मिसाल के तौर पर कुशादादिली, ख़ुशज़ौक़ी, बुर्दबारी (सहनशीलता), नर्मी और रहमत और तेज़ निगाही की सलाहियत वग़ैरा– ऐसी हालत में इनसान पूरे तौर पर अपने रब की रहमतों से फ़ायदा उठाने की पोज़ीशन में हो जाता है और हक़ीक़त में वह अपने रब की रहमतों से फ़ायदा उठाता और मालामाल होता भी है। इसी हालत को कहा जाता है कि आदमी मुकम्मल हो गया। दीन में अस्ल चीज़ इनसान का यही मुकम्मल होना है। सामूहिक व्यवस्था (इजतिमाई निज़ाम) की अहमियत सिर्फ़ इसलिए है कि वह इनसान को मुकम्मल बनाने में मददगार होती है। सामूहिक व्यवस्था अपने आप में हरगिज़ मतलूब (अभीष्ट) नहीं है। शरीअत की निगाह में अस्ल मतलूब इनसान है। यही ख़ास वजह है कि क़ियामत के दिन हर आदमी को अलग-अलग अपना-अपना हिसाब देना होगा। इसमें शक नहीं कि क़ुरआन ने इनसान को मुकम्मल बनाने के लिए जो रास्ता मुक़र्रर किया है वह सामूहिक जीवन से बाहर नहीं बल्कि उसके अन्दर है, लेकिन अस्ल मक़सद इनसान की तरक़्क़ी और उसका मुकम्मल होना ही है। फिर इस्लाम ने जो सामूहिक व्यवस्था पेश की है उसमें न सिर्फ़ यह कि हर आदमी के लिए अपने कमाल (पूर्णता) को पहुँचने की आसानी रखी गई है बल्कि यह ऐसी व्यवस्था है कि जिसमें हर

इनसान दूसरों के कमाल को पहुँचने में मददगार बनता है। यह इस्लामी समाज की एक नुमायाँ ख़ुसूसियत है।

क़ुरआन मजीद में हम देखते हैं कि ख़ुदा की सिफ़ात (गुणों) का बहुत ज़्यादा ज़िक्र किया गया है। यह इसलिए कि इनसान ख़ुदा की सिफ़ात का अक्स (प्रति छाया) क़बूल करे और ख़ुदा के हुक्मों की अस्ल रूह और स्प्रिट से भी वह आगाह हो सके, जैसे क़ुरआन में है—

"अल्लाह नेक और अच्छे-अच्छे काम करनेवालों (सत्यकर्मियों) को पसन्द करता है।" (क़ुरआन, 3:148)

इस आयत में दो बातों की नसीहत की गई है। एक यह कि इनसान को चाहिए कि वह एहसान की रविश इख़्तियार करे। वह दूसरों के लिए दुनिया में एहसान करनेवाला साबित हो। दूसरी यह कि ख़ुदा की तरह वह भी उन लोगों को पसन्द करे जो एहसान की रविश पर क़ायम हों। क़ुरआन में एक जगह कहा गया है—

"एहसान करो जिस तरह ख़ुदा ने तुम्हारे साथ एहसान किया है, और ज़मीन में फ़साद और बिगाड़ मत चाहो। बेशक अल्लाह फ़साद करनेवालों को पसन्द नहीं करता।"

(क़ुरआन, 28:77)

अगर इनसान एहसान की रविश को छोड़ता है तो लाज़मी तौर पर ज़मीन में फ़साद और बिगाड़ पैदा होगा और अल्लाह उन लोगों को हरगिज़ पसन्द नहीं करता जो फ़साद और बिगाड़ के ज़िम्मेदार होते हैं। एक दूसरी जगह कहा गया है—

"इनसाफ़ करो, बेशक अल्लाह इनसाफ़ करनेवालों को पसन्द करता है।" (क़ुरआन, 49:9)

ख़ुदा अस्ल में हमारे अन्दर अपनी सिफ़ात (गुणों) ही का अक्स (प्रति छाया) देखना चाहता है। हमारा वुजूद भी हक़ीक़त में ख़ुदा की

सिफ़ात का एक अक्स है। उसने अपनी सिफ़ात का एक अक्स डाला तो हमारे अन्दर शुऊर और ज़िन्दगी, देखने-सुनने वग़ैरा की सलाहियतें पैदा हो गईं। वह अगर सुनता और देखता है तो उसने हमें भी देखने और सुनने की ताक़त दी। वह अगर 'जो चाहता है कर गुज़रता है' तो उसने हमको भी इरादे और अमल की ताक़त और आज़ादी दी। ठीक इसी तरह वह चाहता है कि अख़लाक़ में भी हम अपने रब की सिफ़ात को अपने लिए रहनुमा बनाएँ। अल्लाह के नबी हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने भी यही बात बताई है। मिसाल के तौर पर कहा—

> "अल्लाह नर्म मिज़ाज है, नर्म मिज़ाजी को पसन्द करता है।" (हदीस : मुस्लिम)

एक दूसरी हदीस में आता है कि अल्लाह के नबी (सल्ल॰) ने कहा—

> "सबसे बढ़कर दानशील अल्लाह है। फिर तमाम इनसानों में सबसे ज़्यादा दानशील मैं हूँ और लोगों में मेरे बाद सबसे बड़ा दानशील वह आदमी है जो इल्म हासिल करके उसे फैलाए। वह आदमी क़ियामत के दिन एक रहनुमा की शक्ल में आएगा या इस सूरत में कि वह अपनी हस्ती में एक समुदाय की हैसियत रखता होगा।" (हदीस : बैहक़ी)

ख़ुदा की एक सिफ़त यह है कि वह सारे जहानों से बेनियाज़ है। तो बन्दे के लिए भी यही ज़ेब (शोभा) देता है कि वह एक ख़ुदा के सिवा हर एक से बेनियाज़ हो जाए। ख़ुदा को वह अपनी ज़रूरत पूरी करनेवाला और अपने आपको उसी का मुहताज बन्दा समझे। बन्दे के लिए यह बेनियाज़ी किसी तरह सही न होगी कि वह अपने रब (पालनहार) से भी बेनियाज़ हो जाए। जब इनसान अपने वुजूद और दुनिया में बाक़ी रहने के लिए अपने रब का मोहताज है तो अपनी दूसरी ज़रूरतों और अपनी तकमील (पूर्णता) में उससे बेनियाज़ कैसे हो

सकता है। लेकिन ख़ुदा ने इसे सिर्फ़ अपना बन्दा बनाया है किसी दूसरे का बन्दा नहीं बनाया है। इसी लिए कहा गया है—

> "कहो, हमने अल्लाह का रंग इख़्तियार किया है, और अल्लाह से बेहतर किसका रंग हो सकता है? और हम तो उसी की बन्दगी करेंगे।" (क़ुरआन, 2:138)

मतलब यह है कि ख़ुदा पाक है तो हमने भी पाकबाज़ी का तरीक़ा अपना लिया है, वह ग़ैरतवाला है तो हमें भी बेग़ैरती से नफ़रत है। वह रहम करनेवाला है तो हमने भी अपने दिल में रहमत को जगह दी है। हम उसकी बन्दगी के बग़ैर उसका रंग इख़्तियार नहीं कर सकते।

तज़किया का अस्ल मतलब

ऊपर बताई गई बातों से साफ़ ज़ाहिर हो जाता है कि दीन का हमारी ज़िन्दगी से किस तरह का ताल्लुक़ है। और किस तरह दीन एक आदमी की तकमील (पूर्णता) की ज़मानत देता है। आदमी की इसी तकमील और उसके कमाल को पहुँचने का नाम नफ़्स का तज़किया है। इनसान एक अख़लाक़ी वुजूद रखता है। शरीअत के नियम हमारे अख़लाक़ ही पर मबनी (आधारित) हैं। तज़किया का मक़सूद (मुराद) यह है कि अख़लाक़ कमाल के दरजे को पहुँच जाए। दीन और शरीअत की अस्ल गरज़ और मक़सद नफ़्स का तज़किया ही है। क़ुरआन मजीद में है—

> "(इबराहीम ने कहा) ऐ हमारे रब! इनके अन्दर इन्हीं में से रसूल भेज देना, जो इनपर तेरी आयतें पढ़े और इन्हें किताब और हिकमत की तालीम दे और इनका तज़किया करे।" (क़ुरआन, 2:129)

यह आयत बताती है कि नबी की यह ज़िम्मेदारी होती है कि वह

लोगों को अल्लाह का कलाम सुनाए, उन्हें किताब (यानी शरीअत के क़ानून) और हिकमत की तालीम दे और इस सबके नतीजे में उनका तज़किया करे। कुछ दूसरी आयतों में तज़किया का ज़िक्र किताब और हिकमत की तालीम से पहले किया गया है।

(देखें, क़ुरआन- 2:151, 3:164, 62:2)

अस्ल में लक्ष्य और अस्ल मक़सद के लिहाज़ से नफ़्स के तज़किए का ज़िक्र पहले किया गया लेकिन चूँकि नतीजे के तौर पर नफ़्स का तज़किया आख़िर में हासिल होता है, इस पहलू से जब इसका ज़िक्र किया तो आख़िर में किया गया और इसके ज़रीओं और साधनों के ज़िक्र को सबसे पहले रखा। दीन में अस्ल मक़सूद और मुराद नफ़्स का तज़किया है। इसकी ताईद (समर्थन) क़ुरआन मजीद की दूसरी आयतों से भी होती है। मिसाल के तौर पर—

> "वह कामयाब हो गया जिसने नफ़्स का तज़किया किया
> और नाकाम हुआ वह आदमी जिसने उसे दबा दिया।"
>
> (क़ुरआन, 91:9,10)

इस आयत से जहाँ यह मालूम होता है कि नफ़्स का तज़किया ही दीन का मक़सद और अस्ल फ़ैसला करनेवाली चीज़ है, वहीं इससे तज़किया के अस्ल मतलब और मंशा पर भी रौशनी पड़ती है। इन आयतों में 'ज़क्काहा' (उसका तज़किया किया) के मुक़ाबले में 'दस्साहा' (उसे दबा दिया) आया है इससे साफ़ वाज़ेह हो जाता है कि तज़किया का मतलब तदसिया के मतलब से बिलकुल विपरीत होगा। लफ़्ज़ तदसिया के सिलसिले में क़ुरआन की इस आयत को लें जिसमें अरब के मुशरिकों का यह हाल बताया गया है कि जब उनमें से किसी को यह ख़बर मिलती कि उसके यहाँ लड़की पैदा हुई है तो उसके चेहरे पर कलौंस छा जाती, वह घुटा-घुटा रहता, और लोगों से छिपा-छिपा फिरता कि ज़िल्लत को बर्दाश्त करके उसे रहने दे या उसे मिट्टी में दबा दे।

"ज़िल्लत को बर्दाश्त करके उसे रहने दे या उसे मिट्टी में दबा दे।" (क़ुरआन, 16:59)

'तदसिया' का मतलब दबाना हुआ तो तज़किया का मतलब उभारना, नशोनुमा देना (CAUSE TO GROW), परवान चढ़ाना, कमाल तक पहुँचाना, बालीदगी (वृद्धि) वग़ैरा होगा।

नफ़्स के तज़किए से मक़सूद (उद्देश्य) यह है कि इनसानी नफ़्स में जो इमकानात (सम्भावनाएँ) रखे गए हैं वे ज़ुहूर (प्रकट) में आएँ। उनके रास्ते को तंग न किया जाए। इनसानी फ़ितरत में जो कुछ है उसमें से कोई भी चीज़ ऐब और बुराई नहीं है कि उसे मिटाने की कोशिश की जाए। नफ़्स को मारना इस्लाम नहीं है, रहबानीयत (संन्यास) है। इस्लाम की विशेषता यह है कि वह ख़ुदा की बनाई हुई किसी चीज़ या उसकी बख़्शी हुई किसी सलाहीयत को नफ़रत के क़ाबिल क़रार नहीं देता। चाहे वह खाने-पीने या जिन्सी जज़्बे (काम-वासना) की तस्कीन की ख़ाहिश हो या क़ौम की रहबरी का जज़्बा। अलबत्ता वह इन ख़ाहिशों को गुमराह होने से बचाता है। वह फ़ितरी और जिबिल्ली (स्वाभाविक) ख़ाहिशों को सही रुख़ से देखता है और उनको उनके सही मक़ामात (स्थानों) पर रखता है।

इस्लाम की तालीम अगर नफ़्स को मारने और त्याग की होती तो अपने मक़सद को ज़ाहिर करने के लिए वह तज़किया का लफ़्ज़ कभी भी इस्तेमाल न करता। क्योंकि तज़किया दबाने और कुचलने को नहीं बल्कि परवान चढ़ाने को कहते हैं। किसी चीज़ को बालीदगी देना (विकसित करना), उसे उसके अस्ल स्रोत से पूरे तौर पर वाबस्ता कर देना उसका तज़किया करना है। तज़किया का काम ज़मीन के किसी टुकड़े पर भी हो सकता है और रूह और नफ़्स पर भी।

तज़किया के माने कुछ लोग पाक-साफ़ करना (Purification) लेते हैं। लेकिन यह सही नहीं है। तज़किया के लिए आलूदगियों (गन्दगियों)

से पाक-साफ़ होना ज़रूरी है लेकिन तज़किया अस्ल में सकारात्मक मतलब रखनेवाला लफ़्ज़ है। क़ुरआन मजीद में है—

> "बेशक हमने इनसान को बेहतरीन शक्ल-सूरत पर पैदा किया है, फिर हमने उसे अत्यन्त पस्ततरीन हालत की तरफ़ लौटा दिया जबकि वह ख़ुद ही गिरनेवाला बना, सिवाए उन लोगों के जो ईमान लाए और नेक काम करते रहे। उनके लिए कभी ख़त्म न होनेवाला अज्र है।" (क़ुरआन, 95:4-6)

क़ुरआन की इन आयतों से कई हक़ीक़तों पर रौशनी पड़ती है। एक यह कि इनसान को ख़ुदा ने अन्दर-बाहर हर लिहाज़ से बेहतरीन रंग-रूप पर पैदा किया है। हमें अपने अन्दर ख़ूबियाँ नहीं पैदा करनी हैं। ख़ूबियाँ तो ख़ुदा ने ख़ुद इनसान के अन्दर रख दी हैं। इन ख़ूबियों से वाक़िफ़ होने की ज़रूरत है। जाहिलीयत और बिगड़े हुए समाज ने जिन आलूदगियों और गन्दगियों से हमारी फ़ितरत को आलूदा कर दिया है इनसे उसे पाक करके उसको उसकी अस्ल शक्ल में देखने की ज़रूरत है।

दूसरे इन आयतों से मालूम होता है कि जिस फ़ितरत और रंग-रूप पर इनसान को ख़ुदा ने पैदा किया है वह उसकी अज़मत (महानता) और बुलन्दी का निशान है। इससे हटना हक़ीक़त में पस्ती में गिरने के समान है। इसी लिए कहा गया, "फिर हमने उसे पस्त से पस्त हालत की तरफ़ लौटा दिया जबकि वह ख़ुद ही गिरनेवाला बना।"

तीसरे यह कि पस्ती में गिरने से वही लोग महफ़ूज रह सकते हैं जो बुलन्द मक़ाम की क़द्र करना जानते हों और उसके तक़ाज़ों को पूरा कर सकें, जो बेयक़ीनी की कैफ़ियत में मुब्तला न हों और ज़िन्दगी में वह तर्ज़े-अमल (रवैया) अपनाएँ जो बुलन्द मक़ाम की शान के मुताबिक़ हो।

चौथे यह कि ऐसे लोग चूँकि नफ़्स की भलाई के ख़िलाफ़ नहीं जाते, नफ़्स की भलाई को बरबाद नहीं करते और किसी भी तरह की

आलूदगियों और गन्दगियों में लिप्त नहीं होते इसलिए महरूमी से दोचार होना उनकी क़िस्मत नहीं।

पाँचवें "कभी ख़त्म न होनेवाला बदला" के शब्द यह ज़ाहिर करते हैं कि यह सब कुछ यूँ ही बिना किसी इरादे के अंजाम नहीं पाता बल्कि इसके पीछे अस्ल में एक अख़लाक़ी क़ानून अपना काम कर रहा होता है। दीन में तंगी मक़सूद नहीं है। मक़सद तो नेमतों का पूरा होना है, और इसका सीधे-सीधे फ़ायदा इनसान के नफ़्स को पहुँचता है। अख़लाक़ी एतिबार से इनसान ख़ुदा की इस देन और बख़्शिश के जवाब में जो बेहतरीन जवाबी अमल पेश कर सकता है वह शुक्र के इज़हार के सिवा और क्या हो सकता है। क़ुरआन में है—

> "अल्लाह तुमपर तंगी नहीं रखना चाहता बल्कि वह तुम्हें पाक-साफ़ करना और तुमपर अपनी नेमत पूरी करनी चाहता है, ताकि तुम शुक्रगुज़ार बनो।" (क़ुरआन, 5:6)

ऊपर हमने कहा था कि नफ़्स के तज़किए ही को दीन में आख़िरी हदफ़ (लक्ष्य) क़रार दिया गया है। इसकी तस्दीक़ (पुष्टि) क़ुरआन की इस आयत "कामयाब हो गया वह शख़्स जिसने अपने नफ़्स का तज़किया किया" (91:9) से होती है। अब इस बारे में कुछ दूसरी आयतें भी देखिए—

> "जिस दिन न माल काम आएगा और न औलाद सिवाए इसके कि कोई भला-चंगा दिल लेकर अल्लाह के पास आया हो।" (क़ुरआन, 26:88,89)

ख़ुदा के यहाँ वही आदमी कामयाब ठहरेगा जो उस फ़ितरत पर क़ायम रहे जिसपर ख़ुदा ने उसे पैदा किया है। दिल को सेहतमन्द रखने के लिए ज़रूरी है कि उससे दुनिया में वही काम लिए जाएँ जिनकी माँग उसकी फ़ितरत करती हो। एक और जगह आया है—

"और जन्नत परहेज़गारों के क़रीब कर दी गई यहाँ तक कि कुछ भी दूर न रही। (कहा जाएगा) यह है वह चीज़ जिसका तुमसे वादा किया जाता था, हर रुजूअ करनेवाले, बड़ी देख-भाल करनेवाले के लिए जो रहमान से डरा ग़ैब (परोक्ष) में, और आया रुजूअ रहनेवाला दिल लेकर।"

(क़ुरआन, 50:31,33)

यहाँ भी कामयाब इनसानों की अस्ल ख़ूबी यह बयान हुई है। कि वे ख़ुदा के सामने ऐसा दिल लेकर हाज़िर हुए जो हमेशा ख़ुदा की तरफ़ रुजूअ है। रुजूअ रहनेवाला दिल इस बात का गवाह (साक्षी) है कि उन्होंने इस नफ़्स को बरबाद नहीं किया जो उनके पास अमानत के तौर पर था। उन्होंने अमानत की हिफ़ाज़त की और निगरानी का हक़ अदा किया। क़ुरआन का एक और बयान देखिए–

"और जो कोई उसके पास (ख़ुदा के पास) ईमानवाला होकर आया जिसने अच्छे काम किए होंगे तो ऐसे लोगों के लिए बुलन्द दरजे हैं, सदाबहार बाग़ जिनके नीचे नहरें बहती होंगी, उनमें वे हमेशा रहेंगे, यह बदला है उसका जिसने अपना तज़किया किया (यानी जिसने ख़ुद को उम्दगी और बालीदगी से बहरामन्द किया)।"

(क़ुरआन, 20:75,76)

यहाँ भी यह साफ़ और स्पष्ट कर दिया गया है कि बुलन्द दरजे और आख़िरत का बदला अस्ल में इनाम है नफ़्स के तज़किए का और यह भी मालूम हुआ कि ईमान और नेक कामों के बग़ैर तज़किए का तसव्वुर भी नहीं किया जा सकता। क़ुरआन ने यहाँ मुज़क्की (तज़कियावाला) उस शख़्स को क़रार दिया है जो ईमान रखता हो और अच्छे काम करे।

इसी सिलसिले में क़ुरआन मजीद की एक आयत और देखिए—

"वे लोग जो ख़ुदा के अह्द (प्रतिज्ञा) और अपनी क़समों का थोड़ी क़ीमत पर सौदा करते हैं उनका आख़िरत में कोई हिस्सा नहीं। अल्लाह न तो उनसे कलाम (बात) करेगा और न क़ियामत के दिन उनकी ओर देखेगा, और न उन्हें मुज़क्की (तज़किया वाला) क़रार देगा, और उनके लिए तो बड़ी दर्दनाक सज़ा है।" (क़ुरआन, 3:77)

इस आयत से भी इसका सुबूत मिलता है कि आदमी के लिए अस्ल कामयाबी यह है कि ख़ुदा की निगाह में वह मुज़क्की क़रार पाए और ख़ुदा अपने फ़ज़्ल (कृपा) से उसे और ज़्यादा उम्दगी और बढ़ोत्तरी प्रदान करे। ऐसे ही लोगों का आख़िरत में हिस्सा है। वही इस लायक़ होंगे कि अल्लाह उनसे बात कर सके और वही इसके हक़दार होंगे कि ख़ुदा रहमत की निगाहों से उन्हें देखे।

यह आयत यह भी बताती है कि जिन्हें नफ़्स का तज़किया हासिल होता है वे न तो बेकिरदार होते हैं और न ही बद-अह्द (वादा तोड़नेवाले)।

नफ़्स के तज़किए के हैरान करनेवाले नतीजे

सही मानी में अगर नफ़्स का तज़किया हो तो इसके नतीजे बड़े इनक़िलाब लानेवाले और हैरतअंगेज़ होते हैं।

क़ुरआन मजीद में आया है—

"कामयाब हो गया वह जिसने अपना तज़किया किया, और अपने रब का नाम याद किया, और नमाज़ पढ़ी। नहीं, बल्कि तुम तो दुनिया की ज़िन्दगी को तरजीह देते हो, जबकि आख़िरत बेहतर और बाक़ी रहनेवाली है। यही कुछ

पहले सहीफ़ों (किताबों) में भी बयान हुआ है।"

(क़ुरआन, 87:14-18)

इन आयतों में नफ़्स के तज़किए और उसके असर और नतीजों को बहुत ही असर डालनेवाले और जामे (व्यापक) अन्दाज़ में बयान किया गया है। अपने नफ़्स के तज़किए की फ़िक्र हमारी ज़िम्मेदारी है। जब हम अपना तज़किया चाहते हैं तो ख़ुदा हमारा सहायक और मददगार बन जाता है। और हक़ीक़त में वही हमारा तज़किया करता है। जब कि क़ुरआन में उसका फ़रमान है—

"क्या तुमने उन लोगों को नहीं देखा जो अपने नफ़्स की बालीदगी (तरक़्क़ी) का दावा करते हैं, (कोई यूँ मुज़क्की नहीं हुआ करता!) बल्कि अल्लाह जिसे चाहता है उसका तज़किया फ़रमा देता है।" (क़ुरआन, 4:49)

एक दूसरी जगह यही हक़ीक़त इन शब्दों में बयान की गई है—

"अगर ख़ुदा का फ़ज़्ल और उसकी रहमत तुमपर न होती तो तुममें से किसी एक का भी तज़किया (आत्म-विकास) न होता, मगर अल्लाह जिसका चाहता है तज़किया करता है, अल्लाह सब कुछ सुनता, जानता, है।" (क़ुरआन, 24:21)

अपने रब का नाम याद करना और उसकी सिफ़तों का शुऊर रखना और फिर उसके असर के तहत नमाज़ पढ़ना नफ़्स के तज़किए का नतीजा भी है और नफ़्स का तज़किया हासिल करने का साधन भी। ख़ुदा से ग़ाफ़िल रहकर और उससे बेनियाज़ी इख़्तियार करके कोई आदमी भी उस कमाल को नहीं पहुँच सकता जिसकी सम्भावना उसके अन्दर रखी गई है। इसके लिए बहुत ज़रूरी है कि आदमी को अपनी मौजूदगी ही का नहीं ख़ुदा का भी शुऊर (एहसास) हो। और यह शुऊर ख़ुदा के लिए उसके ऊपर एक शौक़ और तमन्ना बन जाए। वह ख़ुदा

की तरफ़ राग़िब हो, उसकी तरफ़ बढ़े। यहाँ तक कि ख़ुदा से वह ज़्यादा-से-ज़्यादा क़रीब हो जाए। नमाज़ इसी हक़ीक़त का इज़हार है।

ख़ुदा की तरफ़ यह लपक अपने अन्दर सिर्फ़ कुछ नफ़्सियाती (मनोवैज्ञानिक) नतीजे ही नहीं रखती बल्कि बन्दे का ख़ुदा की तरफ़ बढ़ना हक़ीक़त में फ़ना होनेवाली चीज़ की तरफ़ से ऐसी चीज़ की तरफ़ बढ़ना है जो हमेशा रहनेवाली है और छोटी से बड़ी की तरफ़ कूच करना है। अल्लाह इसके जवाब में इनसान के लिए एक हमेशा रहनेवाली दुनिया के साथ ज़ाहिर (प्रकट) होगा। जहाँ उसे अल्लाह ऐसी ज़िन्दगी देगा जो कभी ख़त्म होनेवाली न होगी, उसे ऐसी रहने की जगह और ठिकाना देगा, जिसकी हैसियत सदाबहार बाग़ों की होगी। जहाँ उसके रब की तजल्ली (नूर) चमक रही होगी, यह ऐसा वक़्त होगा कि—

"कितने ही चेहरे उस दिन तरो-ताज़ा और खिले-खिले होंगे,
अपने रब की तरफ़ देख रहे होंगे।" (क़ुरआन, 75:22,23)

जबकि ऐसे लोग भी होंगे जो अपने रब की मुलाक़ात से बिलकुल वंचित, तबाह और बरबाद होंगे।

"कुछ नहीं, यक़ीनन वे उस रोज़ अपने रब से ओट में होंगे,
फिर वे भड़कती आग में जा पड़ेंगे।" (क़ुरआन, 83:15,16)

नफ़्स के तज़किए का नतीजा यह होता है कि व्यक्ति को आख़िरत में ख़ुशियों से भरी ज़िन्दगी हमेशा के लिए मिल जाती है जबकि नफ़्स का तदसिया हलाकत, तबाही और जहन्नम के अज़ाब का नतीजा होगा। ऊपर बयान हुई सूरा 87 की आयतों में सत्य का इनकार करनेवालों के लिए बड़ी तम्बीह है कि उनकी अक़्लें कहाँ धोखा खा रही हैं। वे अपने तज़किए की तरफ़ से ग़ाफ़िल क्यों हैं? क्या अपनी तकमील (पूर्णता) कोई जुर्म और पाप है कि वे उसकी तरफ़ ध्यान नहीं देते। उनकी ज़िन्दगियों में कोई गहराई और मज़बूत पकड़ नहीं पाई

जाती, उनकी ज़िन्दगियाँ रब के नाम के ज़िक्र (याद) और नमाज़ की शक्ल इख़्तियार नहीं कर पातीं। एक अनन्त जीवन (आख़िरत) की कल्पना से ही उनकी ज़िन्दगी ख़ाली है। वे अपनी ज़िन्दगी के दामन को इतना फैला न सके कि उसमें आख़िरत की कामयाबियाँ समा सकतीं, यह घाटा कितना बड़ा घाटा है। काश! उन्हें यह एहसास होता कि आख़िरत बेहतरीन भी है और हमेशा बाक़ी रहनेवाली भी। नफ़्स के तज़किए की जिन बरकतों का ज़िक्र क़ुरआन में किया गया है उनका ज़िक्र पिछले आसमानी सहीफ़ों में भी हुआ है। फ़लाह और कामयाबी का रास्ता हमेशा एक रहा है। उसी की तरफ़ तमाम नबी (अलैहि॰) अपनी क़ौमों को दावत देते रहे हैं।

भलाई के काम और नफ़्स का तज़किया

ऊपर गुजर चुका है कि नफ़्स के तज़किए के जो तक़ाज़े होते हैं वे तज़किया हासिल करने के ज़रीए भी हैं। मिसाल के तौर पर जिस आदमी की रूह दुनिया-परस्ती, लोभ-लालच और ख़ुदग़रज़ी की गन्दगियों से पाक-साफ़ होकर नशो-नुमा हासिल कर चुकी होगी, ख़ुदा की राह में सदक़ा (दान) देने में उसका दिल कभी नहीं दुखेगा, बल्कि सदक़ा-खैरात से उसके दिल को ख़ुशी और आनन्द प्राप्त होगा। लेकिन सदक़ा जहाँ हमारी रूह की पाकीज़गी और नशो-नुमा का सुबूत है वहीं सदक़ा देने से रूह को ताक़त भी पहुँचती है और उसका तज़किया भी होता है। इसलिए क़ुरआन मजीद में उन मुसलमानों का ज़िक्र करते हुए, जिन्होंने अच्छे और बुरे दोनों तरह के अमल किए थे और फिर जिन्होंने अपने गुनाहों का इक़रार कर लिया था, उनके बारे में कहा गया है—

> "तुम उनके मालों में से सदक़ा लेकर उनको पाक करो और इसके ज़रीए से उनका तज़किया करो, उनके लिए दुआ करो। बेशक तुम्हारी दुआ उनके लिए तस्कीन (शान्ति) का सबब है।" (क़ुरआन, 9:103)

मतलब यह है कि सदक़े से उन्हें पाकीज़गी हासिल होगी। दुनिया के लोभ-लालच से पाक होने में सदक़े का बड़ा दख़ल है। और यह सदक़ा उनके तज़किए का सबब होगा। और तुम उनके लिए दुआ करोगे तो तुम्हारी दुआ से उनके दिल को सुकून हासिल होगा। सदक़े की तरह ही हम दूसरे नेक और अच्छे कामों को भी समझ सकते हैं कि वे भी तज़किया हासिल करने का ज़रीआ बनते हैं।

तज़किए के बाद आदमी ऐसे किरदारवाला हो जाता है कि उसपर भरोसा किया जा सके। फ़रमाँबरदारी में वह कभी पीछे नहीं रह सकता। जो ज़िम्मेदारी भी उसे सौंपी जाएगी वह उसे बहुत ही अच्छे ढंग से अंजाम देगा, वह एक ख़ुदा से डरनेवाला इनसान होगा। ख़ुदा की अज़मत हर वक़्त उसके पेशे-नज़र होगी। जिसके अख़लाक़ की तहज़ीब और तहसीन ख़ुदा की सिफ़तों के ज़रीए से हुई होगी। मुमकिन नहीं कि उसका ख़ुदा तो तमाम जहानों का पालनहार हो और वह दुनिया में बिगाड़ पैदा करे, नस्ली, क़ौमी, लिसानी (भाषायी) वग़ैरा किसी क़िस्म के भेदभाव का शिकार हो। फिर यह भी नहीं हो सकता कि वह सिर्फ़ अपने फ़ायदे को ही देखे। वह तो सारी इनसानियत का भला चाहनेवाला होगा। जिस कामयाबी और फ़लाह की आरज़ू उसे अपने लिए होगी उसकी तमन्ना वह दूसरों के लिए भी करेगा। इसी लिए नबी (सल्ल॰) ने कहा है—

> "जो तुम अपने लिए पसन्द करते हो वही दूसरे इनसानों के लिए पसन्द करोगे तो मुसलमान होगे।"
>
> (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

तज़किए के बाद इल्म, फ़िक्र, अमल और किरदार के लिहाज़ से आदमी के अन्दर किसी क़िस्म की तंगी बाक़ी नहीं रह सकती। वह ख़ुदा-परस्ती के मुक़ाबले में ख़ुदपरस्ती को और हक़पसन्दी के मुक़ाबले में मफ़ादपरस्ती को कभी भी नहीं अपना सकता। उसके लिए इज़्ज़त

और ज़िल्लत का मेयार (आदर्श) वह नहीं हो सकता जिसको गुमराह और भटकी हुई क़ौमें अपने लिए इज़्ज़त और ज़िल्लत का मेयार क़रार देती हैं। वह जानता है कि ज़ुल्म अगर हुकूमत की कुर्सी पर हो तो वह इनसानों के साथ इनसाफ़ नहीं कर सकता और न इस सूरत में कोई दूसरा आदमी सही मानों में इनसानों की कोई ख़िदमत अंजाम दे सकता है। और न ही इस सूरते-हाल की मौजूदगी में वह एक ख़ुदा की पूरी फ़रमाँबरदारी और बन्दगी का फ़र्ज़ अदा कर सकता है, क्योंकि बातिल (असत्य) क़दम-क़दम पर उसको रोकेगा और जगह-जगह उसके हौसलों के आगे रुकावटें खड़ी करेगा। मिसाल के तौर पर अगर वह चाहेगा कि इनसानी समाज से बेहयाई और अश्लीलता का ख़ात्मा हो तो दूसरी तरफ़ कुर्सी पर बैठे (सत्ताधारी) बातिल लोग उसकी चलने नहीं देंगे। वे अपने संसाधनों रेडियो, टी.वी, फ़िल्म वग़ैरा के ज़रीए से घर-घर में गन्दे और फ़हश ड्रामे और पिक्चर और रोमांटिक गीत-संगीत पहुँचा देंगे। वह अगर चाहेगा कि शराब और सूद की लानत से लोगों को निजात दिलाई जाए तो बातिल-परस्तों की हुकूमत अपने फ़ायदों को देखते हुए शराब के ठेके देगी और सूदी क़र्ज़े भी। वह अगर चाहेगा कि लोगों की अख़लाक़ी हालत बेहतर हो और वे दुनिया में ख़ुदापरस्ती की ज़िन्दगी अपनाएँ, एक ख़ुदा के सिवा हर तरह की ग़ुलामी से उन्हें आज़ादी हासिल हो तो जिन लोगों के हाथ में हुकूमत की बागडोर होगी वे अपनी कुर्सी बचाने और रक्षा के लिए हर दावपेंच इस्तेमाल करेंगे, चाहे इससे अख़लाक़, शराफ़त और इनसाफ़ का ख़ून ही क्यों न होता हो। इनसान का पूरा इतिहास इसी की गवाही देता है।

लेकिन इसके बरख़िलाफ़ हक़ पर चलनेवालों को, जिनकी रूह को नशो-नुमा हासिल होगी, अगर हुकूमत मिलती है तो उनका किरदार कुछ और ही होता है। क़ुरआन मजीद इस बारे में जो गवाही देता है वह यह है—

"ये वे लोग हैं कि अगर ज़मीन में हम उन्हें इक़्तिदार (सत्ता) अता करें तो वे नमाज़ क़ायम करेंगे और ज़कात देंगें, और भलाई का हुक्म देंगे और बुराई से रोकेंगे, और सब मामलों का अंजाम अल्लाह ही के हाथ में है।"

(क़ुरआन, 22:41)

मतलब यह है कि उनकी हुकूमत में किसी पहलू से कोई कमी नहीं पाई जाएगी। उनकी हुकूमत में ख़ुदा के हुक़ूक़ का पासो-लिहाज़ भी किया जाएगा और ख़ुदा के बन्दों के हुक़ूक़ भी पूरे तौर पर अदा होंगे। भलाइयों और नेकियों को बढ़ावा दिया जाएगा और बुराइयों की रोक-थाम के लिए कारगर तदबीरें अपनाई जाएँगी। लोगों की तरबियत का अच्छे से अच्छा इन्तिज़ाम होगा। और ये सारी ख़िदमतें अंजाम देते हुए यह एहसास हमेशा पेशे-नज़र रहेगा कि तमाम मामलों का अपना एक हमेशा रहनेवाला असर और अंजाम भी है और वह सीधे-सीधे अल्लाह के हाथ में है, वही उसे वक़्त पर हमारे सामने लाकर रहेगा। ऐसी सूरत में आरज़ी और वक़्ती मुसीबतें, परेशानियाँ और तकलीफ़ें हक़ पर चलनेवालों को कभी सही रास्ते से भटका नहीं सकतीं। वे ऐसी ज़िन्दगी के मुक़ाबले में मौत को तरजीह देंगे जिसमें बातिल के साथ सहयोग करना पड़ता हो। ज़ालिम का साथ देने से ज़्यादा अच्छा वे इसको समझेंगे कि हर हालत में हक़ के साथ रहें चाहे इसके लिए उन्हें अपनी जान ही क्यों न क़ुरबान करनी पड़े। जिनकी तरबियत क़ुरआन करता है उनके जज़्बात (भावनाओं) का अन्दाज़ा उनकी इस दुआ से किया जा सकता है—

"ऐ अल्लाह, सल्तनत के मालिक, तू जिसे चाहे हुकूमत अता करे और जिससे चाहे हुकूमत छीन ले, और जिसे चाहे इज़्ज़त दे, और जिसे चाहे ज़लील करे, तेरे ही हाथ में भलाई है, बेशक तुझे हर चीज़ पर क़ुदरत हासिल है।"

(क़ुरआन, 3:26)

इन अल्फ़ाज़ से वाज़ेह होता है कि क़ुरआन मातहती की ज़िन्दगी को किस नज़र से देखता है। हक़ पर चलनेवाले पराधीन और महकूम हों यह उनके लिए ज़िल्लत की बात है। हक़ पर चलनेवाले हाकिम बनकर किसी को अपना ग़ुल्लाम नहीं बनाते, अपनी निजी ख़ाहिशों और इरादों के बजाय ख़ुदा के हुक्म (आदेश) उनके पेशे-नज़र होते हैं। इस्लाम में जो तज़किया मक़सूद है उसमें बहुत ज़्यादा वुसअत (व्यापकता) है। इस्लाम में तज़किया का सम्बन्ध सिर्फ़ इस बात से नहीं है कि इनसान दिल के अन्दर कोई ख़ास कैफ़ियत पैदा कर ले बल्कि इनसान के फ़िक्र व अमल एवं उसके व्यक्तिगत और सामूहिक पूरे जीवन से इसका सम्बन्ध होता है।

तज़किए की कसौटी पर खरे वही लोग उतरेंगे जो ज़िन्दगी में अपनी ज़िम्मेदारी का पूरा एहसास रखते हों, जिन्हें अल्लाह की सीमाओं का पूरा-पूरा पास और लिहाज़ हो, और जिनको इस मंसब की ज़िम्मेदारी का भी पूरा एहसास हो जिसपर मुस्लिम उम्मत को बिठाया गया है। यही चीज़ है जिसे तक़वा (ईश-भय) के लफ़्ज़ से ज़ाहिर किया गया है। तक़वा के बग़ैर किसी तज़किए का हम तसव्वुर तक नहीं कर सकते। चुनाँचे क़ुरआन तज़किए को तक़वा के लफ़्ज़ से भी ताबीर करता है।

> "और अपने नफ़्स के मुज़क्की होने का दावा न करो, वह (ख़ुदा) उस आदमी को बहुत अच्छी तरह जानता है जिसने तक़वा इख़्तियार किया।" (क़ुरआन, 53:32)

नफ़्स के तज़किए की दावत

क़ुरआन मजीद की दावत हक़ीक़त में लोगों के नफ़्स के तज़किए की दावत है। कहा गया है—

> "क्या तुम्हें मूसा की ख़बर पहुँची है? जबकि उसके रब ने पाक वादी 'तुवा' में उसे पुकारा था कि फ़िरऔन के पास

जाओ, उसने बहुत सिर उठाया है। और उससे कहोः क्या तू यह चाहता है कि तज़किया हासिल करे यानी ख़ुद को उम्दगी और बालीदगी से बहरामन्द करे और मैं तेरे रब (पालनहार) की तरफ़ तेरी रहनुमाई करूँ कि तू डरे?"

(क़ुरआन, 79:15-19)

ये आयतें यह बताती हैं कि हज़रत मूसा (अलैहि॰) जो दावत लेकर फ़िरऔन के पास गए थे वह दावत अस्ल में यह थी कि वह पस्ती से निकल आए, और इस फ़ितरत के मुतालबे पूरे नहीं हो सकते और न वे इम्कानात ज़ाहिर हो सकते हैं जो इनसान में रखे गए हैं जब तक कि इनसान को वह रहनुमाई हासिल न हो जिससे वह अपने रब की तरफ़ बढ़ सके। और इन आयतों से यह भी मालूम होता है कि ख़ुदा से क़रीब होने की अलामत बेख़ौफ़ी, घमण्ड, सरकशी या शेख़ी नहीं है बल्कि इसकी सही और भरोसेमन्द पहचान ख़ुदा का ख़ौफ है। ख़ुदा की महानता के एहसास से आदमी का दिल काँप उठता है। उससे दिल की सख़्ती दूर हो जाती है। दिल की कोमलता ही में वह सलाहीयत होती है कि वह नाज़ुक़ से नाज़ुक़ हक़ीक़तों को जान सके। और जब तक नाज़ुकतरीन और लतीफ़ (सूक्ष्म) हक़ीक़तों का इल्म हमें नहीं होता, जज़बात और एहसासात भी बेहतर नहीं हो सकते और न हमारे दिल उस रूह से आबाद हो सकते हैं जो दीन में मतलूब है। और न ही हमारी गुफ़्तगुओं में वह बात पैदा हो सकती है जिसे सर से पैर तक नूर और हिकमत कहा जा सके।

तज़किए का फ़ायदा अस्ल में आदमी की अपनी ज़ात को पहुँचता है। लेकिन तज़किया उन्हीं लोगों का मुमकिन है जिनके अन्दर ख़ुदा का डर हो और जो नमाज़ का एहतिमाम करते हों।

"तुम तो बस उन्हीं को डरा सकते हो जो ग़ैब में रहते हुए अपने रब से डरते हैं और नमाज़ क़ायम करते हैं। जो

शख़्स अपना तज़किया करता है वह अपनी ही भलाई के लिए करता है और लौटकर जाना तो अल्लाह ही की तरफ़ है।" (क़ुरआन, 35:18)

जाना सबको अल्लाह ही की तरफ़ है। लेकिन उसके यहाँ इज़्ज़त का मक़ाम सिर्फ़ उन्हीं लोगों के लिए है जिन्होंने अपना तज़किया किया और अपनी शख़्सियत को इज़्ज़त बख़्शी, जिन्होंने अपनी पोशीदा (छिपी) सलाहीयतों को परवान चढ़ाया और उनसे काम लिया। इसके बरख़िलाफ़ जो बेपरवाह रहे वे घाटा उठानेवाले और असफल ठहरेंगे। और फिर अपने नुक़सान की वह कोई तलाफ़ी (पूर्ति) न कर सकेंगे।

नफ़्स के तज़किए के साधन

ऊपर बयान हुई बातों मैं तज़किया हासिल करने के सिलसिले में कुछ बातें बताई जा चुकी हैं। फिर भी इस बारे में कुछ अलग से गुफ़्तगू ज़रूरी महसूस होती है। वह तज़किया जो क़ुरआन के नज़रिये से मतलूब है और जिसके लिए नबी (सल्ल॰) को भेजा गया है, उसके हासिल करने के साधन क्या हो सकते हैं? इस सवाल का जवाब हमें उन्हीं आयतों में मिल जाता है जिनमें नफ़्स के तज़किए को आप (सल्ल॰) के नबी बनाए जाने का अस्ल मक़सद क़रार दिया गया है। उनमें से इस आयत पर दोबारा ग़ौर करें।

"ऐ हमारे रब, उनमें, उन्हीं में से एक ऐसा रसूल उठा, जो उन्हें तेरी आयतें सुनाए और उनको किताब और हिकमत की तालीम दे, और उनका तज़किया करे, बेशक तू ग़ालिब, निहायत हिकमतवाला है।" (क़ुरआन, 2:129)

इस आयत से जहाँ यह मालूम होता है कि दीन और शरीअत की अस्ल ग़रज़ और मक़सद नफ़्स का तज़किया है वहीं इस तज़किए के पाने के साधनों की तरफ़ भी इसमें रहनुमाई कर दी गई है। नबी अपनी

क़ौम के लोगों को अल्लाह की आयतें सुनाता और उन्हें किताब और हिकमत की तालीम देता है। फिर इसके ज़ेरे-असर वह क़ौम के लोगों का तज़किया करता है। दीन में जिस क़िस्म का तज़किया मतलूब है उसको पाने के लिए इस तरीक़े (Process) से गुज़रे बग़ैर मुमकिन नहीं, ख़ुदा का रसूल भी यह नहीं करता कि एक निगाह या तवज्जोह से किसी का तज़किया कर दे और उसके अन्दर वे सिफ़ात और ख़ूबियाँ पैदा कर दे जो ख़ुदा को पसन्द हैं। नबी तरबियत और तज़किए का जो निज़ाम अपनाता है उसके बुनियादी तौर पर तीन हिस्से हैं—

(1) आयतों की तिलावत,

(2) किताब की तालीम, और

(3) हिकमत की तालीम।

ये तीनों हिस्से ऐसे हैं जो इनसान की पूरी ज़िन्दगी को अपने घेरे में ले लेते हैं और इन्हीं तीनों से मिलकर पूरा दीन बनता है। इससे साफ़ ज़ाहिर है कि इस्लाम तज़किए का कोई ऐसा निसाब नहीं पेश करता जिसमें आदमी दीन के बहुत-से हिस्सों से बेपरवाह होकर गुज़र सके और दीन के बहुत सारे मुतालबों को नज़रअन्दाज़ करने के बावुजूद उसकी तकमील हो जाए। अब हम तज़किए के निज़ाम के तीनों हिस्सों में से हर एक पर अलग-अलग गुफ़्तगू करनी चाहेंगे।

(1) आयतों की तिलावत

दीन में जिस तरह का तज़किया मतलूब है उसके लिए ज़रूरी है कि अल्लाह के कलाम की तिलावत की जाए या सुना जाए— अल्लाह का कलाम अपने अन्दर ऐसा असर रखता है जिससे ज़ेहन, दिमाग़ और दिल सभी असर क़बूल करते हैं। कितने ही लोग ऐसे मिलेंगे जिनके दिल को क़ुरआन के तरन्नुम (स्वर-माधुर्य) ने घेर लिया और क़ुरआन की इस सुरीली धुन की बदौलत इनकार और गुमराही से बच निकलने

में वे कामयाब हुए। ख़ुदा का कलाम जहाँ अपने अन्दर इनसान के लिए कुछ पैग़ाम रखता है वहीं इसमें हमारे फ़िक्रो-ज़ौक़ और भावनाओं की तरबियत का सामान भी पाया जाता है। क़ुरआन मजीद की तिलावत का कोई बदल (Alternative) नहीं है। अल्लाह के कलाम की तिलावत अस्ल में ख़ुदा से एक तरह की हम-कलामी (बातचीत) है, जिसमें अल्लाह की बातें हमें उसके अपने अलफ़ाज़ (शब्दों) में सुनने को मिलती हैं। अल्लाह के कलाम की तिलावत के क्या प्रभाव पड़ते हैं? इस बारे में क़ुरआन का बयान यह है—

> "और जब उनके (ईमानवालों के) सामने उसकी आयतें पढ़ी जाएँ तो वे उनके ईमान को और बढ़ा दें।"
>
> (क़ुरआन, 8:2)

अल्लाह की आयतों की तिलावत के असर का ज़िक्र एक दूसरी जगह इन शब्दों में किया गया है—

> "जब उन्हें रहमान की आयतें सुनाई जाती हैं तो वे सजदा करते हैं और रोते हुए गिर पड़ते हैं।" (क़ुरआन, 19:58)

मालूम हुआ कि हुक्मों और ज़िन्दगी के निज़ाम से बाख़बर होने के लिए ही नहीं बल्कि अपनी शख़्सियत (व्यक्तित्व) को बनाने के लिए और अपने अन्दर छिपी भावनाओं और एहसासों की सर्द-बिजलियों को बेदार करने के लिए भी ख़ुदा के कलाम की तिलावत ज़रूरी है। ज़ौक़ो-नज़र की तहज़ीब अल्लाह के कलाम की तिलावत करने या सुनने के बग़ैर मुमकिन नहीं।

(2) किताब की तालीम

दूसरी चीज़ है किताब की तालीम। किताब से मुराद वे हुक्म और क़ानून हैं जिनकी तालीम ख़ुदा ने अपने नबी (सल्ल॰) के ज़रीए से हमें दी है। ख़ुदा के हुक्मों और क़ानूनों से अगर हम अनजान हों तो हम

यह अन्दाज़ा नहीं कर सकते कि किस तरह के लोग क़ुरआन मजीद तैयार करना चाहता है और उसे कैसा संगठन या समुदाय मतलूब है। उन हुक्मों के वास्ते से हम एक तरफ़ ख़ुदा की रहमत और अद्ल (इनसाफ़) जैसी सिफ़तों से वाक़िफ़ होते हैं तो दूसरी तरफ़ उन्हीं हुक्मों और नियमों के ज़रीए से हम ज़मीन पर अमन-सलामती और इनसाफ़ के क़ायम होने की उम्मीद कर सकते हैं। अगर हमारे पास कोई न्याय-व्यवस्था नहीं है या है मगर हम उससे अनजान हैं तो क्या चीज़ लेकर हम अमल के मैदान में उतरेंगे और किस चीज़ पर भरोसा रखते हुए हम दुनिया से फ़साद और बिगाड़ दूर करने का पक्का इरादा कर सकेंगे।

फिर किताब की तालीम हमें इसका एहसास दिलाती है कि ये ख़ुदा के दिए हुए क़ानून और उसका दिया हुआ यह ज़िन्दगी का निज़ाम यूँ ही पढ़ने के लिए तो नहीं हो सकता। और न यह इसलिए हो सकता है कि उसकी बस तारीफ़ें की जाएँ। ये क़ानून और नियम तो इसलिए उतारे गए हैं कि दुनिया को इनकी ज़रूरत है। इनसान में ख़ुद ऐसे क़ानून बनाने की ताक़त नहीं।

ये क़ानून हमपर यह ज़िम्मेदारी डालते हैं कि हम उनको लागू करने के लिए माहौल तैयार करें और इसके लिए वह तरीक़ा अपनाएँ जो ख़ुदा के नबी (सल्ल॰) ने अपनी ज़िन्दगी में अपनाया था।

(3) हिकमत की तालीम

तीसरी चीज़ हिकमत है। तज़किया और तरबियत के सिलसिले में हिकमत की ख़ुसूसी अहमियत है। हिकमत अपनी हक़ीक़त के लिहाज़ से अस्ल में एक नूर या ख़ुदा की देन है। इसका इज़हार इनसान की ज़िन्दगी में मुख़्तलिफ़ शक्लों और तरीक़ों में मुमकिन है। वह हिकमत ही है जो ईमानवालों के दिलों में ख़ुदा की पहचान व ईमान और ज़ेहनों

में समझ व बसीरत (दूरदृष्टि) और सूझ-बूझ की सूरत में अपनी जगह बनाती है। और यही हिकमत ईमानवालों की ज़िन्दगी में पाकीज़गी, शराफ़त, एहसान-शनासी, फ़ैयाज़ी, फैसले की ताक़त और बुलन्द किरदार की सूरत में नुमायाँ होती है। हिकमत तमाम भलाइयों और ख़ूबियों का स्रोत है। क़ुरआन में है—

"जिसको हिकमत मिली उसे भलाई का ख़ज़ाना हाथ आया।" (क़ुरआन, 2:269)

मिसाल के तौर पर हिकमतवाला आदमी दुनिया में ख़ुदा का शुक्रगुज़ार बन्दा बनकर रहेगा। वह कभी भी ख़ुदा का नाफ़रमान और एहसान-फ़रामोश नहीं हो सकता। वह ज़िन्दगी में वही तरीक़ा अपनाएगा जो एक शुक्रगुज़ार बन्दे की शान के मुताबिक़ होता है। जैसा कि अल्लाह एक जगह फ़रमाता है—

"हमने लुक़मान को हिकमत अता की कि अल्लाह का शुक्रगुज़ार हो।" (क़ुरआन, 31:12)

मालूम हुआ कि यह हिकमत ही है कि आदमी ख़ुदा कर शुक्रगुज़ार हो। शुक्र की तरह नेकी और सच्ची बातें करना, सख़ावत वग़ैरा अख़लाक़ी ख़ूबियाँ भी अपने अन्दर हिकमत का मफ़हूम रखती हैं।

जिस आदमी को हिकमत मिली हुई हो उसका साथ अकसीर (अचूक दवा) का असर रखता है। यही वजह है कि जिन ईमानवालों को नबी (सल्ल॰) की दोस्ती और साथ मिला उनको वह मरतबा और मक़ाम हासिल हुआ जिसे कोई दूसरा हासिल नहीं कर सकता। ख़ुदा की आयतों की तिलावत का असर क़बूल करने, ख़ुदा के हुक्मों को जानने और हिकमत से फ़ैज़याब होने के बाद मुमकिन नहीं कि आदमी की हस्ती तकमील की मुहताज रह सके। इस निसाब को पूरा करने के बाद

कौन-सी दूसरी कोशिश हो सकती है जो आदमी को फ़िक्री व अमली गुमराहियों में फँसाकर रख सके। हक़ीक़त यह है कि क़ुरआन में तज़किए के जो ज़रीए और साधन बयान कर दिए गए हैं उनमें बढ़ोत्तरी करना मुमकिन नहीं। फिर उससे हटकर वह कौन-सा हुस्न हो सकता है जो हमें अपना गरवीदा (आसक्त) बना सके। उससे हटकर वह कौन-सा बुलन्द मक़ाम है जिसकी कोई तमन्ना कर सके, और उससे हटकर राहतों और दिली आराम की वह कौन-सी क़िस्म है जिसकी चाहत हमें अपनी तरफ़ खींच सके। ख़ुदा की आयतों की तिलावत, किताब की तालीम और हिकमत के ज़रीए से हमें सब कुछ हासिल होता है। वह हमारे वुजूद का कभी अलग न होनेवाला हिस्सा बन जाता है। फिर हम वह नहीं रहते जो उससे पहले होते हैं। इस होने की क़ीमत है। इस सूरत में हम मुहताज और कंगाल नहीं होते। हमारी रूह (आत्मा) को वह नशो-नुमा और बुलन्दी हासिल हो जाती है जिसका तसव्वुर भी आम हालतों में हम नहीं कर सकते। फिर महरूमी की ये आवाज़ हमें सुनाई नहीं दे सकती कि हाय तकमील (पूर्णता) कहाँ!! फिर यह जुमला हमारे लिए बहुत ही बामानी (अर्थपूर्ण) हो जाता है।

> "Man is rich according to what he is, not according to what he has."

सही माने में मालदार वह आदमी होता है जो अपने ख़ुद के वुजूद के लिहाज़ से मालदार हो, न कि इस एतिबार से कि उसके पास कोई बड़ी दौलत और जायदाद है। तज़किए के बाद आदमी अस्ल हिसाब होने (Being) का रखता है, करने (Doing) का नहीं। आदमी के अमल और विचार तो सिर्फ़ इसका पता देते हैं कि वह आदमी क्या है। Not to do but to be is the mark of real practitioner. कभी ऐसा भी होता है कि आदमी कोई नेक काम करता है जबकि वह नेक काम ख़ुद उस आदमी के नेक और अच्छे होने का सुबूत नहीं होता। देखने में तो

वह नेक काम करता है लेकिन ख़ुद बुरा का बुरा ही रहता है। नेक अमल नाम और दिखावे की ख़ाहिश या किसी मजबूरी के तहत भी अंजाम दिया जा सकता है। नेक अमल वह है जो आदमी की पहचान बन जाए और उसकी शख़्सियत (व्यक्तित्व) का प्रतीक साबित हो। तक़वा यही क़ैफ़ियत इनसान के अन्दर पैदा करता है।

अख़लाक़ी फ़िक्र कैसे पैदा की जाए

अख़लाक़

अख़लाक़ अपनी अस्ल हक़ीक़त के लिहाज़ से एक न दिखनेवाली चीज़ है। किसी अख़लाक़ का इज़हार उस अमल व किरदार के ज़रीए से होता है जिसे कोई इनसान अपनी ज़िन्दगी में अपनाया करता है। अख़लाक़ी अमल और काम के लिए ज़रूरी है कि आदमी अपने इरादे और अमल में आज़ाद हो और वह इस आज़ादी को पूरे तौर पर महसूस करता हो। वह ख़ुद से किसी काम के करने या न करने की पोज़ीशन में हो। वह अपने ख़ुद के फ़ैसले के मुताबिक़ उस काम को अंजाम दे, इसका उसे पूरा अधिकार हो। वह इस पोज़ीशन में हो कि जीवन के विभिन्न रास्तों में से अपने लिए जो रास्ता चाहे चुन सके और उसपर चल सके।

इस तरह आदमी फ़ितरी तौर पर अपने फ़ैसले और रवैए का ख़ुद ज़िम्मेदार क़रार पाता है। इसलिए कि उसने ख़ुद अपनी पसन्द से एक फ़ैसला किया और उसपर अमल किया। किसी दूसरे ने उसे एक ख़ास फ़ैसला करने पर मजबूर नहीं किया और न वह इसपर मजबूर था कि किसी मामले में अपने किए हुए फ़ैसले पर अमल ही करे।

जहाँ इरादा और अमल की आज़ादी न पाई जाती हो वहाँ किसी अख़लाक़ का सवाल ही पैदा नहीं होता। यही वजह है कि बेजान चीज़ों, पेड़-पौधों और जानवरों की दुनिया पर अख़लाक़ी मसले पैदा नहीं होते और न बेजान चीज़ों, पेड़-पौधों और जानवरों पर कोई अख़लाक़ी ज़िम्मेदारी लागू होती है।

बेजान चीज़ों और पेड़-पौधों में तो वह शऊर ही नहीं पाया जाता जो किसी अख़लाक़ के लिए बहुत ज़रूरी है। रहे जानवर तो उनकी ज़िन्दगी सिर्फ़ स्वभाव और आदत की एहसानमन्द होती है। उनकी अपनी एक लगी-बँधी राह होती है जिसपर वे ज़िन्दगी भर चलते रहते हैं।

फिर जहाँ अख़लाक़ का इमकान नहीं पाया जाता वहाँ शख़्सियत (व्यक्तित्व) की किसी तरक़्क़ी और नशोनुमा का भी इमकान नहीं होता और न किसी पस्ती और गिरावट का। इस दुनिया में सिर्फ़ इनसान ही ऐसी मख़लूक़ है जिसकी ज़िन्दगी में अख़लाक़ी मसले पैदा होते हैं। और सिर्फ़ उसी के यहाँ शख़्सियत की तरक़्क़ी और नशोनुमा या पस्ती और गिरावट का सवाल पैदा होता है।

कोई भी रवैया अपनाने में इनसान के पेशे-नज़र भलाई-बुराई, सुन्दर-असुन्दर, लाभ-हानि, लज़ीज़-ग़ैर-लज़ीज़, तरक़्क़ी-पस्ती, आफ़ियत-हलाकत; कामयाबी-नाकामी वग़ैरा का ख़याल होता है। फिर इसी के साथ ग़ैर-मुहज़्ज़ब (असभ्य) लोगों की निगाह फ़ौरन हासिल होनेवाले फ़ायदों पर होती है, किसी दूरगामी नतीजों के बारे में वे सोच भी नहीं सकते।

इस सिलसिले में एक बुनियादी चीज़ हमारे सामने यह भी रहनी चाहिए कि हर आदमी ज़िन्दगी के मक़सद और दुनिया में इनसान की हैसियत के बारे में कोई न कोई ख़याल या विचार ज़रूर रखता है। चाहे वह विचार और ख़याल ग़लत हो या सही। यह ख़याल भौतिकवादी भी हो सकता है और अभौतिकवादी (ग़ैर-माद्दापरस्ताना) तथा रूहानियत का हामिल भी। ज़िन्दगी के बारे में इनसान के जो विचार भी होंगे उनसे उसके अच्छे-बुरे, सुन्दर-असुन्दर वग़ैरा का ख़याल भी लाज़िमी तौर पर मुतास्सिर (प्रभावित) होगा। एक भौतिकवादी व्यक्ति का दुनिया में सुन्दर-असुन्दर और कामयाबी-नाकामयाबी के बारे में जो ख़याल होगा

वह उस ख़याल व विचार से अलग होगा जो एक अभौतिकवादी आदमी सुन्दर-असुन्दर और सफलता व असफलता के बारे में रखता होगा।

ऐसी सूरत में ज़िन्दगी के अस्ल मक़सद और इनसान की दुनिया में अस्ल हैसियत के बारे में अगर इनसान की सोच और विचार ग़लत हुआ तो फिर लाज़िमी तौर पर उसके पूरे अख़लाक़ी निज़ाम में बिगाड़ और ख़राबियाँ पैदा हो जाएँगी। और ये बिगाड़ और ख़राबियाँ इतने ख़तरनाक क़िस्म की हो सकती हैं कि इनकी वजह से पूरी ज़मीन फ़ितना-फ़साद का गढ़ बन जाए।

सही और ग़लत का एहसास हर इनसान के अन्दर मौजूद है। इसका इनकार मुमकिन नहीं। 'कांट' (एक दार्शनिक) जिसका कहना है कि अक़्ल तमाम चीज़ों को अपने घेरे में नहीं कर सकती, वह भी अख़लाक़ी हुस्न को भरोसे के क़ाबिल समझने पर मजबूर हुआ है। उसने यह भी माना है कि फ़र्ज़ अदा करते रहने का ख़याल इनसान के इरादे की आज़ादी को भी साबित करता है। यह आज़ाद इनसान के लिए बहुत क़ीमती चीज़ है। यह उसकी तरक़्क़ी और बढ़ोत्तरी की ज़मानतदार है। लेकिन इस आज़ादी के सिलसिले पर अगर वह ग़ैर-ज़िम्मेदाराना चलन अपनाता है तो हलाकत ही उसकी क़िस्मत है।

इस वक़्त हमें इसपर इज़हारे-ख़याल नहीं करना है कि इस्लाम के अलावा दूसरे मज़हब (धर्म) अख़लाक़ की क्या कल्पना रखते हैं और उसे हम किस हद तक क़ाबिले-तवज्जोह क़रार दे सकते हैं। पिछले ज़माने में मुस्लिम चिन्तकों और फ़लसफ़ियों (दार्शनिकों) ने अख़लाक़ी बातों के बारे में किन रायों और ख़यालों का इज़हार किया है उसका जायज़ा लेना भी इस वक़्त ज़ेरे-बहस नहीं है। यहाँ हम सिर्फ़ यह देखने की कोशिश करेंगे कि अख़लाक़ और अख़लाक़ी मसलों के बारे में इस्लाम हमारी क्या रहनुमाई करता है।

इस्लामी विचारधारा

इस्लामी विचारधारा के अनुसार यह कायनात (सृष्टि) ख़ुदा की बनाई हुई है। ख़ुदा ने पूरी कायनात को इनसानों के लिए वशीभूत कर रखा है। चूँकि कायनात और ख़ुद इनसान ख़ुदा का पैदा किया हुआ है इसलिए यहाँ हक़ीक़त में ख़ुदा ही का इरादा और मंसूबा काम कर रहा है। हर चीज़ से इसका सुबूत मिलता है। हर चीज़ उसके जमाल व कमाल का मज़हर है। फिर ख़ुदा की हस्ती ऐसी है जो हर क़िस्म की कमियों और ऐबों से बिल्कुल पाक और तमाम ख़ूबियों और कमालात से सुशोभित है। उसको पस्ती नहीं, वह ग़ालिब है और हर चीज़ पर उसी की क़ुदरत है। वह ज़िन्दा और हमेशा रहनेवाला; तमाम इल्मों और ख़ैर व भलाइयों और ख़ूबियों का मालिक है। सब के सब मामले उसी की तरफ़ पलटनेवाले हैं। वह बेनियाज़ और सब उसके मुहताज हैं। वह सबसे बड़ा दानशील और बेहिसाब रहमतों और मुहब्बतों का स्रोत है। उसको जानने के बाद अस्ल में कुछ जानना और उसको पा लेने के बाद हक़ीक़त में कुछ पाना बाक़ी नहीं रहता। हर चीज़ में मानवीयत, (अर्थवत्ता) मक़सदीयत और हुस्न व ख़ूबी का होना उसी माबूद (पूज्य) ने रखी है। तमाम चीज़ें उसकी तस्बीह (गुणगान) करती हैं। अच्छी और सच्ची भावनाओं, एहसासों, तख़लीक़ी (रचनात्मक) क्षमताओं और रंगा-रंगी विचारों का अस्ल स्रोत वही है। जड़ता, निष्क्रियता, बेरंगी, मलिनता, घबराहट और मायूसी का उससे कोई रिश्ता नहीं, किसी भी चीज़ में सुन्दरता, नज़र की कुशादगी, दिलकशी और आकर्षक-शक्ति उसी के कारण है। आज़ादी और ख़ुशी व आनन्द का अस्ल सबब वही है। उससे जुड़ने में ज़िन्दगी व वुजूद का सबब और उससे बेनियाज़ी सरासर हलाकत और घाटा है।

ख़ुदा का वुजूद ही इस्लामी फ़िक्र का अस्ल केन्द्र एवं धुरी है।

ख़ुदा ने इनसान को सिर्फ़ बनाया ही नहीं, बल्कि बेहतरीन मख़लूक़ बनाया और उसके लिए ख़ैर-भलाई और कमाल की राह आसान की। इनसान कमाल को हासिल कर सके उसके इम्कानों (सम्भावनाओं) को ख़ुद उसकी ज़िन्दगी के वुजूद में रख दिया। उसने इनसान की फ़ितरत को अपनी फ़ितरत से हम आहंग रखा।

> "यह अल्लाह की (बनाई हुई) फ़ितरत है जिसपर उसने इनसानों को पैदा किया, अल्लाह की सृष्टि में तबदीली नहीं हो सकती। यही दीन है जिसे पायदारी और हमेशगी लाज़िम है।" (क़ुरआन, 30:30)

एक हदीस के शब्द ये हैं—

> "ख़ुदा ने आदम (इनसान) को अपनी सूरत पर पैदा किया।"
>
> (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

इस तरह इनसान को वह मरतबा अता हुआ जिससे बुलन्दतर किसी मरतबे और मक़ाम का हम ख़याल भी नहीं कर सकते।

ख़ुदा ने इनसान के ज़ाहिरी और जिस्मानी हुस्न और सन्तुलन को उसके अन्दरूनी हुस्नो-कमाल का एक निशान ठहराया।

> "ख़ुदा ने आसमानों और ज़मीन को हक़ के साथ (बामक़सद) पैदा किया और उसने तुम्हारी सूरतगरी की तो क्या ही अच्छी सूरतगरी की, और उसी की तरफ़ अख़िरकार जाना है।" (क़ुरआन, 64:3)

यानी जब इनसान को ज़ाहिर के लिहाज़ से हुस्नो-कमाल अता हुआ है तो उसकी ज़िन्दगी का मक़सद भी लाज़िमी तौर पर हसीनतर होगा। ज़ाहिर से कहीं ज़्यादा अहमियतवाला होना इनसान की ज़िन्दगी का मक़सद है। अमौलिक और ग़ैर-अहम चीज़ को जब हुस्नो-ख़ूबी से आरास्ता रखा गया है तो अस्ल चीज़ हुस्नो-ख़ूबी से ख़ाली कैसे हो

सकती है। इसलिए इनसान की ज़िन्दगी का मक़सद कोई कमतर और बेवक़अत (बेकार) चीज़ नहीं हो सकती। उसकी ज़िन्दगी का अस्ल मक़सूद ख़ुदा ही हो सकता है। वही इनसान की ज़िन्दगी के सफ़र की अस्ल मंज़िल है। अल्लाह जो ख़ैर ही ख़ैर है, उसकी रिज़ा और ख़ुशनूदी को हासिल करना ही इनसान का क़ीमती सरमाया क़रार पा सकता है। अल्लाह के राज़ी होने का एक चमत्कारी मतलब भी है, मगर आम लोग उस मतलब से अपरिचित होते हैं। अल्लाह की रिज़ा और ख़ुशनूदी उस के इनामो-इकराम के पाने का साधन भी है और अपने-आप में ख़ुद एक मक़सद भी।

> "मोमिन मर्दों और औरतों से अल्लाह ने ऐसे बाग़ों का वादा किया है जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी जिनमें वे हमेशा रहेंगे और अद्न की जन्नतों में पाकीज़ा क़यामगाहों का, और अल्लाह की ख़ुशनूदी व रज़ामन्दी का जो सबसे बढ़कर है, यही सबसे बड़ी कामयाबी है।" (क़ुरआन, 9:72)

एक और पहलू से भी ग़ौर करें। इनसानी नफ़्स का मक़सद और उसकी ग़रज़ो-ग़ायत वही चीज़ हो सकती है जो दर्जे में इनसानी नफ़्स से कमतर न हो बल्कि उससे बुलन्द व बरतर हो। और ज़ाहिर है कि एक नफ़्से-मुतलक़ (Supreme and absolute personality) यानी ख़ुदा ही उसकी आख़िरी मंज़िल और मक़सूद क़रार पा सकता है। इनसान के लिए सबसे बड़ा चाहनेवाला उसका ख़ुदा ही है। इसलिए लाज़िमी तौर पर इस्लाम में नैतिकताओं का अस्ल मक़सूद ख़ुदाई तरीक़े या ख़ुदाई फ़ितरत की पैरवी है। मानो इस्लाम की तालीम ही है कि "ख़ुदावन्दी की फ़ितरत इख़्तियार करो (Adopt the manner of God)। यहाँ किसी को यह ग़लतफ़हमी हरगिज़ नहीं होनी चाहिए कि ख़ुदा की फ़ितरत की पैरवी का मतलब इनसान की अपनी ख़ाहिशात और उसकी नफ़सियात की पामाली है, और इस्लामी अख़लाक़ी निज़ाम

की हैसियत सिर्फ़ बाहर से लागू किए गए क़ानूनों की है। यह बात इस सूरत में कही जा सकती थी जब इनसानी फ़ितरत और ख़ुदाई फ़ितरत में तज़ाद (विरोधाभास) पाया जाता, इनसानी फ़ितरत के तक़ाज़ों और ख़ुदाई फ़ितरत में तज़ाद मुमकिन नहीं। यह इसलिए कि ख़ुदा ने अपनी फ़ितरत पर इनसान को पैदा किया है। ख़ुदाई फ़ितरत की पैरवी हक़ीक़त में अपनी ही फ़ितरत की पासदारी है। इनसान जब ख़ुदा की मंशा को पूरा करता है तो अस्ल में वह अपनी फ़ितरत पर क़ायम रहता है, बल्कि इससे आगे बढ़कर यह बात कही जा सकती है कि जब वह ख़ुदा की पहचान हासिल करता है तो उसके ज़रीए से सही माने में उसे अपनी भी पहचान होती है। यह वह समानता और अनुकूलता है जो अख़लाक़ी फ़र्ज़ों (कर्तव्यों) को इनसान के लिए कोई बाहरी चीज़ नहीं रहने देती।

इनसान की कोशिशों का केन्द्र और धुरी ख़ुदा को क़रार देने के बाद इस्लाम यह बताता है कि इनसान की अस्ल फ़ितरत यह चाहती है कि वह अपनी कथनी-करनी और अपने विचारों-ख़यालों में रब्बानी रंग अपनाए। यहाँ तक कि ख़ुदा के रंगो-नूर से उसकी पूरी ज़िन्दगी रंगीन और चमकदार हो जाए।

> "(कहो) ख़ुदा का रंग इख़्तियार करो, उसके रंग से बेहतर किसका रंग हो सकता है? और हम तो उसी की बन्दगी करते हैं।" (क़ुरआन, 2:138)

उसी की बन्दगी करेंगे, ज़िन्दगी में उसी का रंग इख़्तियार करेंगे। यह हमारा पक्का और मुस्तक़िल फ़ैसला है। हमारी कोशिश होगी कि ख़ुदा की सिफ़तों (ख़ूबियों) का अक्स (छायारूप) हमारी ज़िन्दगी में ज़ाहिर हो। ख़ुदा की सिफ़तों के ज़रीए से हम ज़िन्दगी की क़दरों से परिचित होते हैं। ख़ुदाई सिफ़तें, ज़िन्दगी की क़दरों की तरफ़ हमारी रहनुमाई करती हैं। ज़िन्दगी की क़दरों से महरूमी ज़िन्दगी से महरूम

होने के समान है। ख़ुदा की सिफ़तों से जहाँ ख़ुदा की पहचान होती है वहीं दूसरी तरफ़ उनके ज़रीए से हमें उसकी मर्ज़ी का भी इल्म होता है। इस तरह अल्लाह के बनाए हुए तरीक़े की पैरवी की राह हमारे लिए आसान हो जाती है और हमारे लिए बुलन्दी को हासिल कर लेना मुमकिन हो जाता है।

इस हक़ीक़त का इज़हार क़ुरआन में इन अलफ़ाज़ में किया गया है—

> "जो लोग आख़िरत पर ईमान नहीं रखते, बुरी मिसाल है उनकी, और अल्लाह की मिसाल बड़ी शानवाली और बुलन्द है। वह तो ज़बरदस्त है, हिकमतवाला है।"
>
> (क़ुरआन, 16:60)

मतलब यह है कि जब ख़ुदा की शान सबसे बड़ी और बुलन्द है तो उसके बन्दों की हालत ख़राब और बदतर नहीं होनी चाहिए थी। यह इसलिए कि अल्लाह अपने बन्दों का साथी और कारसाज़ है, वह क्यों चाहेगा कि उसके बन्दों की हालत बदतर हो। लेकिन जब कोई आदमी ख़ुद ही अपने रब से नाता तोड़ ले तो वह अपनी इस हालत के लिए ख़ुद ही ज़िम्मेदार है। अल्लाह ने तो लोगों को हमेशा रहने वाली, बुलन्द और बेहतर ज़िन्दगी की दावत दी थी मगर कुछ लोगों ने उसकी नाक़दरी की और इस ख़त्म होनेवाली दुनिया ही को अपना मक़सूद (लक्ष्य) ठहरा लिया और उस इनाम की तरफ़ से आँखे बन्द कर लीं जो उनके लिए मुक़द्दर था। उनका ख़ुदा तो ज़बरदस्त और हिकमतवाला है लेकिन उन्हें इज़्ज़त, ताक़त, हिकमत और आगाही के मुक़ाबले में ज़िल्लत, ग़फ़लत और बेख़बरी ही पसन्द रही, तो ऐसी सूरत में उन्हें ज़िल्लत और पस्ती से नजात देनेवाला कोई नहीं हो सकता।

इनसान की ज़िन्दगी का सारा मामला उसके अख़लाक़ी रवैए के अधीन है। इसी लिए इस्लाम ने अख़लाक़ को अपने फ़िक्री और अमली

निज़ाम में बुनियादी अहमियत दी है। चुनाँचे इस्लाम के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने अपने भेजे जाने की अस्ल ग़रज़ ही बेहतरीन अख़लाक़ की तकमील क़रार दी है। नबी (सल्ल॰) का बयान है—

"मुझे सिर्फ़ इसलिए भेजा गया है कि मैं अख़लाक़ी ख़ूबियों की तकमील कर दूँ।"

(हदीस : मुवत्ता इमाम मालिक, मुसंनद अहमद)

अख़लाक़ में जिन बातों का भी तसव्वुर पाया जा सकता है, इस्लाम ने अपने अख़लाक़ी नज़रिये में उन सभी का लिहाज़ रखा है। इस लिहाज़ से उसके अख़लाक़ी नज़रिये में कोई कमी या ऐब नहीं पाया जाता। अख़लाक़ी फ़िक्र में आमतौर पर इन चीज़ों से बहस की जाती है।

1. बुलन्द अख़लाक़ का तअय्युन (निर्धारण)
2. सही और ग़लत का फ़ैसला या इल्म हासिल करने का ज़रीआ।
3. ख़ैर (भलाई) के काम अंजाम देने पर आमादा करनेवाले प्रेरक।

जैसा कि बताया जा चुका है कि अल्लाह की ख़ुशनूदी इस्लाम की निगाह में वह हक़ीक़ी गरज़ो-ग़ायत और बड़ी भलाई है जिसको पाने के लिए हमारी सारी सरगर्मियों को अस्ल में वक़्फ़ होना चाहिए। ख़ुदा जिन चीज़ों से राज़ी होता है उनकी तकमील (पूर्णता) ही ज़िन्दगी का अस्ल नसबुल-ऐन है। यही वह मक़सद है जो दुनिया में हर क़िस्म की गुमराहियों से मामून और महफ़ूज (सुरक्षित) रहने का ज़ामिन है। उस मक़सद के पा लेने से इनसान की दूसरी सभी ज़रूरतों और ख़ाहिशों की तकमील मुमकिन है। इस्लाम में शरीअत की अस्ल बुनियाद इनसान की फ़ितरी ज़रूरतों और उसकी फ़ितरी ख़ाहिशों पर रखी है। इनसान की फ़ितरत नेक है। इसलिए कि ख़ुदा ने उसे अपनी फ़ितरत पर पैदा किया है। इस्लाम में अद्ल-इनसाफ़, मुहब्बत, मुरव्वत, हुस्न और सच्चाई वग़ैरा

जिन जीवन-मूल्यों को अहमियत दी गई है, उनमें तमाम मूल्य आपस में एक-दूसरे से वाबस्ता और एक-दूसरे के मददगार हैं। इन मूल्यों की हैसियत एक नामयाती कुल (चरम अवस्था) की है, जिसे अल्लाह की फ़ितरत बताया गया। इस्लामी फ़िक्र ने ज़िन्दगी की क़दरों और मूल्यों को एक कुल (पूर्णता) की शक्ल देकर उन्हें अपने निज़ाम में निहायत मौज़ूँ और मुनासिब जगह दी है। ये क़दरें अस्ल में ख़ुदा की सिफ़तों से ही वुजूद में आई हैं। हक़ीक़त के एतिबार से ख़ुदा की सिफ़तें ही इनसानी ज़िन्दगी में मिसाली समाज के बुनियादी प्रेरक की शक्ल अपना लेती हैं। इनके वास्ते से हमको आसानी के साथ अपनी ज़िन्दगी में सही और ग़लत का इल्म (ज्ञान) हो जाता है। ख़ुदा और उसकी मर्ज़ियाँ ही इनसान के लिए वह मेयार है जिसके ज़रीए से वह बहुत आसानी से हुस्नो-ऐब और भलाई-बुराई का फ़ैसला कर सकता है। मिसाल के तौर पर क़ुरआन मजीद में है—

"दूसरों के साथ एहसान की रविश अपनाओ जिस तरह ख़ुदा ने तुम पर एहसान किया है।" (क़ुरआन, 28:77)

इससे मालूम हुआ कि ज़िन्दगी में एहसान का तरीक़ा ही इनसान के लिए मौज़ूँ (उपयुक्त) है। इसलिए कि यही अल्लाह की सुन्नत (तरीक़ा) है। इसके अलावा जो रविश अपनाई जाएगी वह ग़लत और फ़साद का सबब बनेगी। चुनाँचे इसके बाद ही क़ुरआन में आया है—

"ज़मीन में फ़साद और बिगाड़ मत फैलाओ, बेशक ख़ुदा फ़साद फैलानेवालों को पसन्द नहीं करता।"

(क़ुरआन, 28:77)

हदीस में भी आया है—

"अल्लाह नर्मीवाला है, नर्मी को पसन्द करता है।"

(हदीस : अबू-दाऊद, मुसनद अहमद)

इस तरह कितनी ही क़ुरआन मजीद की आयतें और हदीसें हैं जिनसे मालूम होता है कि ख़ुदाई सिफ़तें इनसान की ज़िन्दगी के लिए रहनुमाई की हैसियत रखती हैं। इसके अलावा खुद इनसान के अन्दर फ़ितरी तौर पर नेकी से लगाव और बुराई से कोई मुनासिबत नहीं पाई जाती है। नेकियों से इनसान की फ़ितरत को लगाव होता है। बुराइयों को देखकर उसे अजनबीयत का एहसास होता है और उसकी तबीअत उनसे नफ़रत करती है। यही वजह है कि क़ुरआन और हदीस में नेकियों को 'मारूफ़' और बुराइयों को 'मुनकर' से ताबीर किया गया है। हदीस में है—

> "नेकी तो बहुत अच्छी आदत है। और गुनाह वह है जो तुम्हारे जी में खटक और ख़लिश पैदा करे और तुमको यह बात नागवार मालूम हो कि लोग इस से वाक़िफ़ हो जाएँ।"
>
> (हदीस : मुस्लिम)

ख़ुदा का नबी बाहर से कोई चीज़ दाख़िल नहीं करता जिसकी बुनियाद पहले से हमारे अन्दर मौजूद न हो। इसलिए क़ुरआन मजीद रसूल को ज़िक्र के लफ़्ज़ से ताबीर करता है।

अच्छे और ख़ैर के कामों को अंजाम देने पर आमादा करनेवाले प्रेरक यूँ तो कई-एक हो सकते हैं जिनपर हम आगे चलकर गुफ़्तगू करेंगे। लेकिन इस सिलसिले में सबसे बड़ा उत्प्रेरक ख़ुदा की ख़ुशनूदी के पा लेने की आरज़ू है। दूसरे तमाम प्रेरकों की हैसियत इस बड़े और अस्ल प्रेरक के सहायक और मददगार की है।

इस्लामी अख़लाक़ी निज़ाम की ख़ुसूसियतें

इस्लामी अख़लाक़ी निज़ाम की अपनी कुछ ख़ुसूसियतें हैं जिनकी तरफ़ इशारा करना ज़रूरी महसूस होता है।

1. इस्लामी अख़लाक़ी निज़ाम मज़बूत उसूलों पर आधारित है। इसमें

किसी कमी-बेशी और तब्दीली की गुंजाइश नहीं पाई जाती। इसकी अख़लाक़ी क़दरें मुस्तक़िल और कभी न बदलनेवाली हैं। यह इसलिए कि यह निज़ाम किसी नाक़िस ज़ेहन की पैदावार नहीं है बल्कि 'अक़्ले-कुल' यानी ख़ुदा का दिया हुआ है, जो हर तरह के ऐबों से पाक और हर चीज़ और ज़रूरतों से बाख़बर है।

2. यह अख़लाक़ी निज़ाम इनसान के सिर्फ़ व्यक्तिगत जीवन के अख़लाक़ी सुधार का मुतालबा नहीं करता बल्कि यह इनसान की सामूहिक ज़िन्दगी में बुनियादी क्रान्ति का तक़ाज़ा करता है। इस्लाम में अख़लाक़ ज़िन्दगी के तमाम हिस्सों और पहलुओं में व्याप्त है। ज़िन्दगी के किसी भाग को भी उससे अलग नहीं किया जा सकता।

3. यह अख़लाक़ी निज़ाम ख़ैर (नेकी और भलाई) पर आधारित है। ख़ैर अपने अन्दर कमाल की ख़ासियत रखता है, और चूँकि कमाल एक रचनात्मक और तामीरी सिफ़त है, इसलिए अस्ल में यह अख़लाक़ी निज़ाम एक रचनात्मक और तामीरी निज़ाम है।

कमाल ही नहीं ख़ैर के अन्य तत्व भी नैतिक व्यवस्था में क्रियान्वित पाए जाते हैं। ख़ैर के जिन तत्वों का ज्ञान हमें अल्लाह की सिफ़तों के ज़रीए से हासिल होता है उनमें से कुछ महत्वपूर्ण मूल तत्व ये हैं : जीवन, शक्ति, इनसाफ़, हुस्न, सच्चाई, रहमत, मुहब्बत, हमेशगी और वहदत (एकत्व) वग़ैरा।

जीवन और विकास

अख़लाक़ का इस्लामी तसव्वुर जीवन और उसके विकास का सबब और भलाई का प्रतीक है। इस तरह यह निज़ाम एक विकासशील नज़रिया रखता है। लेकिन इस्लाम के सामने सिर्फ़ भौतिक चीज़ों का विकास नहीं है।

भौतिक और दुनियावी ज़िन्दगी तो बहुत थोड़ी और नापाएदार है। इस्लाम के सामने अस्ल में मौत ज़िन्दगी का विकास है। हमेशगी की ज़िन्दगी के विकास के लिए इस्लाम उन क़दरों के वास्ते से काम लेने की तालीम देता है जो ख़ुद दाइमी, मुस्तक़िल और अबदी ज़िन्दगी की ज़मानतदार हैं। इस्लाम जिस ज़िन्दगी की ख़ुशख़बरी देता है वह ऐसी अबदी ज़िन्दगी है जो ज़मानो-मकान के भेद-भावों और पाबन्दियों से ऊपर है, इसलिए ज़मानी व मकानी शऊर (विवेक) उसकी पहुँच से बाहर रहता है। अलबत्ता अन्तर-बोध की शक्ति के ज़रीए से इससे आगाही मुमकिन है। क़ुरआन मजीद में है—

> "उन लोगों को जो ख़ुदा के रास्ते में मारे गए मुर्दा न समझो, बल्कि वे अपने रब के पास ज़िन्दा हैं, रोज़ी पा रहे हैं।" (क़ुरआन, 3:169)

जब ख़ुदा ज़िन्दा-जावेद हस्ती है तो लाज़िमी तौर पर ख़ुदाई फ़ितरत की पैरवी जीवन-दायिनी होगी और उससे भागना मौत व हलाकत साबित होगा।

यहाँ यह बात याद रखने की है कि जीवन की पूर्णता का कोई अन्त नहीं। ज़िन्दगी की ख़ासियत यह है कि उसे हमेशा नए-नए कमालातों की तलाश और तलब में रहना है। ख़ूब से ख़ूबतर की आरज़ू उसकी तक़दीर है।

हुस्नो-सदाक़त

इस्लामी अख़लाक़ी क़दरों में हुस्नो-सदाक़त को भी बुनियादी अहमियत हासिल है। हदीस में आया है कि "ख़ुदा जमील (ख़ूबसूरत) है और हुस्नो-जमाल को पसन्द करता है।" उसने इनसान के अन्दर-बाहर को ख़ूबसूरती के साँचे में ढाला है। क़ुरआन मजीद का मुताला (अध्ययन) बताता है कि हुस्न एक क़तई व वैश्विक सौन्दर्यपूर्ण मूल्य है,

जो अपने प्रभाव के लिहाज़ से ख़ुशी, इत्मीनान और आश्चर्य का मुस्तहिक़ है। ख़ुदा की हस्ती वह है जिसमें हुस्नो-ख़ूबी अपनी इन्तिहा को पहुँची होती है। "उसके बहुत-से अच्छे-अच्छे नाम हैं।" (क़ुरआन, 20:8) यानी वह बेहतरीन गुणों से सुशोभित है। इस्लाम इनसान के अख़लाक़ और अमल में भी अर्थपूर्ण गुण पैदा करना चाहता है और किरदार व अमल में अस्ल सुन्दरता उस वक़्त पाई जा सकती है जबकि इनसान की दौड़-धूप की दिशा ख़ुदा की ओर हो और ख़ुदा की मंशा व उसकी फ़ितरत ही उसकी ज़िन्दगी की अस्ल रहनुमा हो। धारणा के पहलू से जिस चीज़ का नाम हुस्न है अमल के एतिबार से उसको अख़लाक़ के नाम से जानते हैं। यह हुस्न कोई फ़रेब और धोखा नहीं है, बल्कि यह हक़ीक़त और सच्चाई का मज़हर (प्रतीक) है। हम पहले बता चुके हैं कि जितनी भी अख़लाक़ी क़दरें है उनमें गहरा सम्बन्ध पाया जाता है। वे एक-दूसरे से जुड़ी हुई हैं। उनमें पूर्ण एकता और अनुकूलता पाई जाती है। जो चीज़ हक़ीक़त से दूर होगी वह हुस्न व ख़ूबसूरती की ख़ूबियों से ख़ाली होगी।

इल्म और सूझ-बूझ

ख़ुदा का इल्म कुल (पूर्ण) है। वह कब पसन्द करेगा कि लोग इल्मो-हिकमत और दानाई से वंचित हों। क़ुरआन मजीद जिन अख़लाक़ी बातों को हमारे सामने रखता है उसका मुतालबा है कि हम उन्हें दानाई और सूझ-बूझ की वजह से मानें। अन्धी पैरवी और अन्धविश्वास से वह हमें बचाना चाहता है। इसलिए कहा गया है—

> "अल्लाह ईमानवालों का दोस्त है। वह उन्हें अन्धेरों से निकालकर रौशनी की तरफ़ लाता है।" (क़ुरआन, 2:257)

एक दूसरी जगह कहा गया है—

"क्या वह आदमी जो मुर्दा था फिर हमने उसको ज़िन्दगी

दी और उसके लिए रौशनी कर दी जिसको लिए हुए वह लोगों के बीच चलता-फिरता है, उस आदमी की तरह हो सकता है जो अन्धेरों में पड़ा हुआ हो, और उनसे हरगिज़ निकलनेवाला न होगा।" (क़ुरआन, 6:122)

शक्ति और ग़ल्बा

शक्ति, ग़ल्बा और सत्ता ख़ुदा की सिफ़त (ख़ूबी) है। इनसान का भी फ़र्ज़ है कि वह शक्ति और सत्ता की अहमियत को नज़रअन्दाज़ न करे। किसी अख़लाक़ी निज़ाम के साथ अगर कोई ताक़त व सत्ता न हो तो वह अख़लाक़ी निज़ाम दुनिया में केवल एक फ़रियाद बनकर रह जाएगा। वह कभी भी लोगों को ज़िल्लत और पस्ती से निकालने में कामयाबी हासिल नहीं कर सकता। इस हक़ीक़त को क़ुरआन मजीद की इस आयत में स्पष्ट रूप से बयान किया गया है--

"कहो, ऐ अल्लाह! सल्तनत के मालिक! तू जिसे चाहे सल्तनत दे और जिससे चाहे सल्तनत छीन ले, और जिसे चाहे इज़्ज़त दे और जिसको चाहे ज़लील (रुसवा) कर दे, तेरे हाथ में भलाई है, बेशक तूझे हर चीज़ पर क़ुदरत हासिल है।" (क़ुरआन, 3:26)

इस आयत में जिस ख़ैर की दरख़ास्त की गई है उससे मुराद सल्तनत और सत्ता है। क़ुदरतवाला ख़ुदा कब चाहेगा कि वह अपने चाहनेवालों को बेचारगी की हालत में छोड़ दे।

अद्ल व इनसाफ़

अद्ल भी ख़ुदा की एक ख़ास सिफ़त है। अद्ल व इनसाफ़ पर आधारित, ज़मीन में अद्ल के निज़ाम को क़ायम करना इस्लामी अख़लाक़ी ख़याल का एक अहम मुतालबा है। अद्ल के मतलब में यह

बात भी दाख़िल है कि आम ज़िन्दगी में भी हम इनसाफ़ के दामन को हाथ से न छोड़ें। अपना हो या पराया, इनसाफ़ सब के साथ रवा रखा जाए। इसलिए वादों, समझौतों का एहतिराम, बराबरी और अद्ल व इनसाफ़ के मामले में हक़ (सत्य) का पास व लिहाज़ रखना ज़रूरी क़रार दिया गया है।

नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया है—

> "उस आदमी में ईमान नहीं जिसमें अमानतदारी नहीं और वह आदमी बेदीन है जो अहद (समझौते) की पाबन्दी नहीं करता।" (हदीस : मुसनद अहमद)

रहमत और मुहब्बत

रहमत और मुहब्बत के बग़ैर अख़लाक़ी फ़िक्र या अख़लाक़ी नज़रीया (विचार) बेरूह और बेजान होकर रह जाता है। ज़िन्दगी में लज़्ज़त व सुरूर (आनन्द) उसकी तरोताज़गी, आकर्षण और दिलकशी मुहब्बत से वाबस्ता है। क़ुरआन मजीद में ख़ुदा की रहमतवाली सिफ़त का हवाला इतनी बार दिया गया कि इसका शुमार करना मुश्किल है। फिर ये क़ुरआन के वाज़ेह (स्पष्ट) अलफ़ाज हैं—

> "और वह बड़ा बख़्शनेवाला, बहुत मुहब्बत करनेवाला है।"
>
> (क़ुरआन, 85:14)

इस मुहब्बत का तक़ाज़ा यह है कि हमें ख़ुदा के बन्दों और ख़ुद अपने-आप से मुहब्बत हो। अपने ख़ास-क़रीबी और रिश्तेदार ही नहीं, हमें सारी इनसानियत से मुहब्बत हो। फिर वे लोग हमारी तवज्जोह के ख़ासतौर से हक़दार ठहरते हैं जो परेशान-हाल, मुहताज और बेचारगी की हालत में ज़िन्दगी गुज़ार रहे हों। जान-पहचान के लोगों और पड़ोसियों तक ही नहीं हमारी यह मुहब्बत अजनबीयों, मुसाफ़िरों और सारे इनसानों तक छायी होनी चाहिए।

वहदत (एकत्व)

इससे पहले यह बात आ चुकी है कि इस्लामी अख़लाक़ी निज़ाम की हैसियत ज़िन्दगी की अलग-अलग क़दरों के किसी समूह की नहीं है, बल्कि एक कुल (पूर्ण अवस्था) की है जिसमें तमाम ही क़दरें घुल-मिलकर एक हो जाती हैं।

इसके अलावा इस्लामी अख़लाक़ी निज़ाम में हम देखते हैं कि एक ही मक़सद है जिसके मातहत तमामतर फ़िक्र होता है और फिर तमामतर अमल उस फ़िक्र के अधीन होता है। इस तरह अख़लाक़ी ज़िन्दगी में एक ऐसी वहदत (इकाई) पैदा हो जाती है जिसका ख़याल भी आम हालतों में नहीं किया जा सकता।

भलाई के काम पर उभारनेवाले

अख़लाक़ से सम्बन्धित मसलों के बारे में एक बहुत अहम मसला ख़ैर के अमल के प्रेरक की नियति का है। यानी वह कौनसा प्रेरक है जो इस्लाम को भलाई के कामों को अंजाम देने पर आमादा कर सकता है। इस्लाम के नज़दीक अल्लाह की ख़ुशनूदी पाने की तमन्ना ही ख़ैर के कामों की अस्ल मुहर्रिक (प्रेरक) है। यह प्रेरक फ़ितरी भी है और निहायत ताक़तवर भी। फिर यह प्रेरक ऐसा है कि किसी शक्ल में इसे बदला नहीं जा सकता। आदमी के अच्छी फ़ितरतवाला होने की पहचान यह है कि ख़ुदा की ख़ुशनूदी की आरज़ू उसके दिल की धड़कन बन जाए और रब की ग़ज़बनाकी का अन्देशा उसे किसी हालत में भी अपनी ज़िम्मेदारियों की तरफ़ से ग़ाफिल न होने दे। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि इस्लाम दूसरे फ़ितरी प्रेरकों को नकारता है। दूसरे प्रेरक हक़ीक़त में अस्ल प्रेरक के सहायक व मददगार की हैसियत रखते हैं ज़िन्हें नज़रअन्दाज़ करना सही न होगा। इनकी भी अपनी बड़ी

अहमियत है। मिसाल के तौर पर यहाँ कुछ ऐसे मुहर्रिकों (प्रेरकों) का ज़िक्र किया जाता है।

शुक्र का जज़्बा

ख़ुदा के अनगिनत एहसानों के एहसास और इल्म की वजह से दिल में शुक्र का जज़्बा (भाव) उभरता है। शुक्र का यह जज़्बा न सिर्फ़ यह कि नेक कामों और ख़ुदा की इताअत (अज्ञापालन) पर आदमी को आमादा करता है बल्कि हक़ीक़त में इस जज़्बे को इस्लाम ने ईमान की भी बुनियाद क़रार दिया है। चुनाँचे क़ुरआन मजीद में है—

> "तुम्हें अज़ाब देकर ख़ुदा को क्या करना है अगर तुम शुक्रगुज़ार हो और (उनके नतीजे में) ईमान ले आओ।"
>
> (क़ुरआन, 4:147)

शुक्र के जज़्बे को इस्लामी अख़लाक़ी निज़ाम में ख़ैर के कामों के लिए एक मुहर्रिक (प्रेरक) की हैसियत हासिल है। ख़ुदा का शुक्रगुज़ार बन्दा वही है जो उसका इताअत-गुज़ार (आज्ञापालक) भी है। क़ुरआन मजीद इसी लिए इस जज़्बे को ख़ास तौर से उभारता है। मिसाल के तौर पर—

> "कहो वही है जिसने तुम्हें पैदा किया और तुम्हारे लिए कान और आँखें और दिल बनाए। तुम शुक्र थोड़े ही अदा करते हो।" (क़ुरआन, 67:23)

अंजाम और नतीजे पर निगाह

आदमी की नज़र अगर हमेशा अंजाम पर हो तो वह अपनी ज़िम्मेदारियों की तरफ़ से कभी ग़ाफ़िल नहीं हो सकता। ग़फ़लत की अस्ल वजह यह है कि इनसान आम तौर पर हक़ीक़ी अंजाम से बेख़बर रहकर ज़िन्दगी गुज़ारता है। क़ुरआन मजीद अस्ल अंजाम और

अस्ल नतीजे को बार-बार सामने रखता है ताकि इनसान इस सिलसिले पर अपनी फ़िक्री व अमली ज़िम्मेदारियों की ओर ध्यान दे सके। मिसाल के तौर पर क़ुरआन मजीद ग़ाफ़िल इनसानों को ख़िताब करते हुए कहता है—

"बल्कि तुम दुनिया को तरजीह देते हो, हालाँकि आख़िरत बेहतर और बाक़ी रहनेवाली है।" (क़ुरआन, 87:16,17)

यानी यह दुनिया का मरहला तो गुज़र जाएगा लेकिन इसके बाद की दुनिया जिसे आख़िरत कहते हैं बाक़ी रहनेवाली है। वहाँ इस मौजूदा दुनिया से बेहतर तुम्हारे लिए ज़िन्दगी का साज़ो-सामान मौजूद है शर्त यह है कि तुम अपने अमल के तरीक़े से अपने-आपको इसका हक़दार बना सको।

अन्दरूनी तहरीक (प्रेरणा)

इनसान के अन्दर ख़ुद ऐसी चीज़ें मौजूद हैं जो उसे ईमान और अमल पर उभारने के लिए काफ़ी हैं। इसी लिए क़ुरआन मजीद इनसान की अन्दरूनी मानसिकता और अन्दर की हक़ीक़तों को वाज़ेह और स्पष्ट करता है। मिसाल के तौर पर कहा गया कि—

"और ज़मीन में यक़ीन करनेवालों के लिए बहुत-सी निशानियाँ हैं, ख़ुद तुम्हारी अपनी ज़ात में भी, क्या तुम देखते नहीं ?" (क़ुरआन, 51:20,21)

एक दूसरी जगह कहा गया है—

"बल्कि इनसान ख़ुद अपने लिए निगरानी करनेवाली आँख है, अगरचे वह अपने बहाने पेश करे।"

(क़ुरआन, 75:14,15)

अक़्ल (बुद्धि)

इनसान अगर अक़्ल से काम ले तो वह ख़ुद एक मुहर्रिक है। अक़्ल के तक़ाज़ों में एक यह है कि आदमी अमल के मैदान में पीछे न रहे। क़ुरआन मजीद में आया है—

> "क्या तुम लोगों को नेकी और वफ़ादारी का हुक्म देते हो और अपने-आपको भूल जाते हो हालाँकि तुम किताब भी पढ़ते हो? फिर क्या तुम अक़्ल से काम नहीं लेते?"
>
> (क़ुरआन, 2:44)

नफ़ा-नुक़सान

नफ़ा हासिल करने और नुक़सान व घाटे से बचने के लिए हर आदमी कोशिश करता है। यह अमल का एक ऐसा प्रेरक है जिसे आम और ख़ास लोग सभी जानते हैं। इसलिए क़ुरआन मजीद नुक़सान और ख़सारे का एहसास दिलाते हुए कहता है—

> "कहो, क्या हम तुम्हें उन लोगों की ख़बर दें जो अपने अमल के लिहाज़ से सबसे बढ़कर घाटे में हैं, वे जिनकी सारी कोशिश दुनिया की ज़िन्दगी में अकारथ गई और वे यही समझते रहे कि ये बहुत अच्छा काम कर रहे हैं।"
>
> (क़ुरआन, 18:103,104)

क़ुरआन मजीद की सूरा नूह में आया है—

> "मैंने कहा, तुम अपने रब से मग़फ़िरत चाहो, बेशक वह बड़ा ही मग़फ़िरत करनेवाला है, वह आसमान को तुमपर ख़ूब बरसता छोड़ेगा, वह माल और बेटों में बढ़ोत्तरी करेगा और तुम्हारे लिए बहुत सारे बाग़ पैदा करेगा और तुम्हारे

लिए नहरें जारी करेगा, तुम्हें क्या हो गया है कि तुम अल्लाह के लिए किसी वक़ार व बड़प्पन की आशा नहीं रखते।"

(क़ुरआन, 71:10-13)

आगे बढ़ जाने का जज़्बा

इनसान की एक-दूसरे से आगे बढ़ने और पीछे न रहने की ख़ाहिश फ़ितरी है, अमल के लिए आगे बढ़ निकलने के इस जज़्बे को भी क़ुरआन मजीद ने उभारा है। इसलिए क़ुरआन में एक जगह आया है—

"अगर अल्लाह चाहता तो तुम सबको एक उम्मत बना देता, लेकिन जो कुछ उसने तुम्हें दिया है उसमें वह तुम्हारी आज़माइश करना चाहता है। अतः भलाई के कामों में तुम एक-दूसरे से आगे बढ़ने की कोशिश करो।"

(क़ुरआन, 5:48)

एक दूसरी जगह और आया है—

"अपने रब की बख़शिश और उसकी जन्नत की तरफ़ बढ़ने में एक-दूसरे से बाज़ी ले जाओ, जिसकी वुसअत (विस्तार) आसमान और ज़मीन जैसी है।"

(क़ुरआन, 57:21)

ग़ैरत का एहसास

ग़ैरत का एहसास भी अमल के लिए एक अहम मुहर्रिक (प्रेरक) है। क़ुरआन ने भलाई के कामों के लिए इस ग़ैरत के ज़ज़्बे को भी उभारने की कोशिश की है। मिसाल के तौर पर एक जगह आया है—

"तुम्हें क्या हुआ है कि अल्लाह के रास्ते में, और कमज़ोर

मर्दों, औरतों और बच्चों के लिए न लड़ो, जो कहते हैं कि हमारे रब, तू हमें इस बस्ती से जिसके लोग ज़ुल्म करनेवाले हैं, निकाल ले, और हमारे लिए अपनी तरफ़ से कोई मददगार बना।" (क़ुरआन, 4:75)

जमालयाती एहसास और ख़ुशज़ौक़ी

आदमी को जमूद (जड़ता) का शिकार होने से बचाने में उसके ज़ौक़ का भी दख़ल हो सकता है। जमालयाती एहसास ख़ुद अमल के लिए अहम दाइया (Motive) है। अच्छा स्वभाव अस्ल में अन्दरूनी हुस्न और ख़ूबसूरती ही का दूसरा नाम है। अन्दरूनी हुस्न या अच्छा स्वभाव अपने बड़प्पन और असर में ज़ाहिरी हुस्न से कम नहीं होता। ज़रूरत सिर्फ़ बेहतरीन एहसास के पैदा होने की है।

नबी (सल्ल॰) इस सच्चाई को बहुत अच्छी तरह जानते थे कि अच्छी आदत (स्वभाव) के बग़ैर जिसका इज़हार आदमी के कामों और किरदार के ज़रीए से होता है ऊपरी हुस्न व जमाल की कोई ख़ास क़द्रो-क़ीमत नहीं हो सकती। इसलिए नबी (सल्ल॰) ने यह दुआ माँगी—

"ख़ुदाया, तूने मेरे ज़ाहिर को हसीन बनाया है, तू मेरी आदत (स्वभाव) को भी हसीनतर बना।"

क़ुरआन मजीद का बयान है कि ख़ुदा ने इनसान को हसीनतरीन ज़ाहिरी और अन्दरूनी शक्ल व सूरत में पैदा किया है (95:4)। इस फ़ितरी हुस्न का अगर एहसास हो जाए तो इनसान कभी उसे बरबाद होते नहीं देख सकता। इसी लिए जमालयाती एहसास को उभारकर क़ुरआन मजीद इनसान को अच्छे अमल करने पर आमादा करता है।[1]

1. मिसाल के तौर पर देखें क़ुरआन, (82:6-9) और (64:3)।

इसी तरह सुकून और इत्मीनान के पाने की चाहत, अपनी ज़ात की पूर्णता (तकमील) की तमन्ना भी इस्लाम की नज़र में ख़ैर के कामों के अहम मुहर्रिकों (प्रेरकों) में से हैं।[2]

2 . (13:28) , (87:14,15), (91:9,10)